

संक्षिप्त जीवनी, गुरुवाणी
भावार्थ सहित

श्री गुरु तेग़ बहादर जी





पब्लिकेशन ब्यूरो
पंजाबी यूनिवर्सिटी पटियाला

श्री गुरु तेगबहादर जी

(१६२१—७५)

संक्षिप्त जीवनी, गुरुबाणी भावार्थ सहित

गुरदेव कौर

जी० एस० आनन्द



पब्लिकेशन ब्यूरो
पंजाबी यूनिवर्सिटी पटियाला

©
पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला

SRI GURU TEGHBAHADUR JI *(Hindi)*
by
Gurdev Kaur
G. S. Anand

ISBN 81-7380-291-2

१९९६
द्वितिय संस्करण : ११००
मूल : ७०.००

सरदार रणबीर सिंह, रजिस्ट्रार, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला ने प्रकाशित की
तथा राम प्रिंटोग्राफ, नई दिल्ली में मुद्रित हुई।

विषय-सूची

भूमिका

धर्म-रक्षक गुरु तेगबहादुरजी के संदेश को जन साधारण तक पहुंचाने के लिए गुरुजी की संक्षिप्त जीवनी एवं गुरु-वाणी (अर्थ सहित) पंजाबी, हिन्दी एवं उर्दू में प्रकाशित की जा रही है। प्रयत्न यह किया गया है कि सरल व सरस भाषा में गुरुजी के अद्वितीय सत्य एवं पवित्र जीवन को जन-कल्याणार्थ मूर्तिमान किया जा सके।

आज से तीन सौ वर्ष पूर्व अत्याचार व अन्याय की लहर को रोकने के लिए, पीड़ितों की सहायतार्थ एवं व्यक्तिगत धर्म की स्वतन्त्रता के लिए गुरुजी दिल्ली में शहीद हो गए। इस महान् बलिदान के फलस्वरूप जुल्म, अन्याय एवं उत्पीड़न का अन्त हुआ, धर्म की विजय हुई। आज हम स्वतन्त्र हैं: परन्तु इस स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए अनेक व्यक्तियों ने बलिदान दिया। इनमें महत्त्वपूर्ण आत्म-बलिदान गुरु तेगबहादर जी का था।

गुरुजी ने आत्मसम्मान पर स्थिर रहने पर बल दिया। परन्तु इसके साथ-साथ उन्होंने यह भी उपदेश दिया कि इसके लिए दूसरों को भयभीत करने का यत्न नहीं करना चाहिए। जन-कल्याण का अर्थ यह है कि अपने निजी लाभ अथवा स्वार्थ के प्रयत्नों को उचित सीमा में रखकर मानवता के प्रति स्व-कर्त्तव्य सम्बन्धी ईमानदारी को सम्मुख रखना चाहिए। सांसारिक उन्नति एवं आध्यात्मिक जागृति के लिए निरन्तर व दृढ़ यत्न किए जाएं। इसी में "लोक सुखीए परलोक सुहेले" का रहस्य छिपा है।

इस कार्य की पूर्ति में व इस योजना को साकार रूप प्रदान करने में प्रो० गुलवन्त सिंह एवं सरदार हजारा सिंह जी ने विशेष यत्न किया है। लेखकों की ओर से किया गया यह यत्न श्लाघनीय है, एवं वे धन्यवाद के पात्र हैं।

पंजाबी यूनिवर्सिटी,
पटियाला

इन्द्रजीत कौर
वाइस-चांसलर

श्री गुरु तेगबहादर जी

तिथि क्रम से जीवन-घटनाओं की एक झलक

अप्रैल १, १६२१	अवतार दिवस, गुरु के महल, अमृतसर।
अप्रैल २६, १६३५	करतार पुर के युद्ध में वीरता का प्रदर्शन।
१६३५-४४	कीरत पुर में गुरु हरिगोबिन्दजी के साथ निवास।
१६४४-६४	साधना काल : बाबा बकाला में माता नानकी जी के साथ निवास करते हुए नाम वाणी का निरन्तर अभ्यास करने में तल्लीन रहे। कुछ समय तीर्थ यात्रा भी की।
मार्च ३०, १६६४	"बाबा बकाला" सांकेतिक शब्दों के माध्यम से गुरु हरिकृष्णजी ने गुरु गद्दी प्रदान की।
नवम्बर २२, १६६४	श्री दरबार साहिब अमृतसर के दर्शनार्थ गए।
जून १९, १६६५	आनन्दपुर 'चक माता नानकी' की नींव रखी।
नवम्बर ८, १६६५	धमतान साहिब से दिल्ली की ओर प्रस्थान।
दिसम्बर १३, १६६५	दिल्ली से पूर्व की ओर प्रस्थान।
जून-अक्तूबर १६६६	पटना-निवास।
अक्तूबर १६६६-६९	धर्म-प्रचार करते हुए तेगपुर (हाज़ो, आसाम) पर्यन्त गमन।
मार्च १६७२	आसाम से वापिसी, पथ में धर्म-प्रचार करते हुए आनन्दपुर साहिब पहुंचे।
मई २५, १६७५	कश्मीरी पण्डितों का एक दल पण्डित कृपाराम मटन निवासी के नेतृत्व में आनन्दपुर आया।

जुलाई १२, १६७५	मलकपुर (रोपड़) में बन्दी हुए भाई सतीदास, भाई मतीदास एवं भाई दिआल दासजी भी गिरफ्तार हुए)।
नवम्बर ११, १६७५	"सीसगंज" दिल्ली में शहीदी दी।
नवम्बर १२, १६७५	रकाब गंज, नई दिल्ली में शरीर (धड़) का दाह-संस्कार किया गया।
नवम्बर १६, १६७५	शीश का दाह-संस्कार गुरु गोबिन्दसिंह जी ने आनन्दपुर में "सीस गंज" नामक स्थान पर किया।

गुरु तेग बहादर

(१६२१-१६७५ ई०)

भारतीय धर्म-चिन्तन एवं धर्म-साधना के इतिहास में गुरमत के आदर्श की स्थापना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि गुरु नानक देव जी का जन्म पंजाब में हुआ, तथापि गुरु जी ने चिन्तन, नैतिकता एवं कर्म का जो दृष्टिकोण तथा धर्म-चेतना का जो लक्ष्य प्रस्तुत किया उसकी महानता सर्वव्यापी है। वास्तव में गुरु नानक देव जी के अवतार के साथ ही धर्म-चेतना तथा सदाचारिक कर्त्तव्य की एक ऐसी लहर पंजाब में उठी जिसके परिणामस्वरूप मानव-व्यक्तित्व की नवीन धारणा का प्रारम्भ हुआ। जहाँ धर्म के नाम पर अनेक छोटे-छोटे सम्प्रदाय एवं उपसम्प्रदाय विद्यमान थे जो अपने सिद्धान्तों एवं उपसिद्धान्तों के विकास, प्रचार तथा प्रसार के लिए प्रयत्नशील थे, वहाँ गुरु नानक देव जी ने मानव-व्यक्तित्व की एक नवीन संकल्पना प्रस्तुत की। इस संकल्पना के अनुसार वही व्यक्ति सत्य-निष्ठ, सदाचारी तथा धर्म-परायण हो सकता है जिसके लिए सम्पूर्ण मानव-जाति एक परिवार के रूप में हो अथवा जो "वसुधैव कुटुम्बकम्" के सिद्धान्त को मानता हो। समानता, ऐक्य एवं सहकारिता को सामाजिक जीवन की आधार-शिला बनाना चाहिए। गुरु नानक देव जी के प्रभाव के फलस्वरूप जिस विचार-सारणी का प्रादुर्भाव हुआ, उसे परवर्ती गुरुओं ने न केवल प्रवर्तमान रखा, अपितु समय व स्थिति के अनुसार उसमें प्रसार व वृद्धि भी की। गुरु नानक देव जी द्वारा प्रसारित विचार-विधान की खास विशेषता यह थी कि उन्होंने सर्वप्रथम सांसारिक जीवन व आध्यात्मिक साधना के सह-अस्तित्व की चेतना उत्पन्न की। उन्होंने अपने हाथ से काम करने को पवित्र समझने का मार्ग प्रदर्शित किया। इस प्रकार व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन व व्यवहार सम्बन्धी अनेक पहलुओं के संबन्ध में क्रान्तिकारी अनुभूति उत्पन्न करने में गुरु नानक देव जी अग्रणी बने। गुरु अंगद तथा गुरु अमरदास जी ने सहभोज की प्रथा स्थापित करके पक्षपात एवं छुआछूत रहित समानता की भावना को क्रियात्मक रूप दिया। गुरु रामदास जी ने अमृतसर बसाया। इस प्रकार उन्होंने एक ऐसे धार्मिक केन्द्र की स्थापना की जहाँ गुरमत के नवीन आदर्शों के अनुयायी एकत्रित होकर सामूहिक एकता

का रसास्वादन कर सकें। गुरु अर्जन देव जी ने श्री गुरु ग्रन्थ साहिब की पावन पवित्र "बीड़" का सम्पादन किया। यह ग्रन्थ विभिन्न स्थानों पर निवास करने वाले सिक्ख श्रद्धालुओं के हृदयों की श्रद्धा-युक्त धड़कनों को एक स्वर में पिरोने में सजीव प्रेरणा-स्रोत सिद्ध हुआ। पंचम गुरु जी आत्म बलिदान के अग्रदूत बने। भारत के धार्मिक इतिहास में आत्म-बलिदान की परम्परा की स्थापना गुरुओं की देन है। गुरु हरिगोविन्द जी ने सर्वप्रथम "मीरी" एवं "पीरी" अर्थात् भौतिकता एवं आध्यात्मिकता का समन्वय स्थापित किया। गुरु तेग बहादर जी ने अपने महान् आत्म बलिदान द्वारा गुरमत परम्परा को दृढ़ता एवं प्रौढ़ता प्रदान की। गुरु तेग बहादर जी का सम्पूर्ण जीवन इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि गुरमत का मुख्य लक्ष्य मानव, मानवता के अधिकार एवं उसके गौरव की रक्षा करना है।

संक्षिप्त जीवनी

श्री गुरु तेग बहादर जी महान् त्यागी, दिव्य तपस्वी, उदारचित्त, परोपकारी, देग-तेग के धनी, धर्म की चादर एवं पीड़ितों के रक्षक थे। उन्होंने श्री हरिगोविन्द साहिब के घर में माता नानकी जी के उदर से अमृतसर में अप्रैल १, १६२१ ई० को भौतिक शरीर धारण किया।

आप के जन्म स्थान को "गुरु के महिल" इस पवित्र नाम से स्मरण किया जाता है। उस स्थान पर अब एक भव्य गुरुद्वारा है। आप गुरु हरिगोविन्द जी के पंचम तथा सबसे छोटे सुपुत्र थे। **"गुर विलास पातशाही छेवीं"** के लेखक का कथन है—

चड़िओ दिवस गुर जी सुनयो जेठे बिधीए संग॥
आए महली गाव ही लिया धार आनं॥ १०३६॥

दोहरा

तब गुर सिस को बन्दना कीनो अति हित लाइ॥
बिधीआ कहि कस बन्दन की कहो मोहि सभ भाइ॥ १०३७॥
तब गुर कहि इह गुर, भए पांच सुतन मो जान॥
दीन रछ संकट हरै सदा यही पहिचान॥ १०३८॥

चौपई

तेग बहादर नाम सु गायो।
तांहि नाम श्री मुखो अलायो।
सुनत मात सभ ही हरखानी।
नाम कहिओ गुर पुलकत बानी॥ १०३९॥

(अध्याय, १०)

आयु के साथ-साथ तेग बहादर जी की तप एवं त्याग के प्रति रुचि बढ़ती गई। वे असाधारण दिव्य बालक थे। वे दिन-रात समाधि में लीन रहते थे। माता नानकी जी के चिन्ता व्यक्त करने पर गुरु हरिगोविन्द साहिब ने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा कि "तेग बहादर ने शक्तिशाली गुरु बनना है एवं धर्म की रक्षा के हेतु आत्म-बलिदान देना है तथा विश्व के समक्ष एक अद्वितीय दृष्टान्त प्रस्तुत करना है।" आप केवल पांच वर्ष के थे कि बाबा बुड्ढा जी (१५०६-१६२६ ई०) आपको शस्त्र और शास्त्र की शिक्षा प्रदान करने के लिए नियुक्त किए गए। तदनन्तर बाबा जी एवं भाई गुरदास जी (१५५१-१६३७ ई०) के निरीक्षण में अन्य कई विद्वान भी आपको शिक्षा प्रदान करते रहे। इस प्रकार आप विद्या के बहुमुखी अंगों से विभूषित एवं संपन्न हो गए और आप उन सभी प्रकार के दिव्य उत्तम गुणों से समन्वित हो गए जो एक महान् गुरु के लिए अत्यावश्यक हैं। तेग बहादर अपने सत्य स्वरूप गुरु-पिता गुरु हरिगोविन्द जी के अमूल्य वचनों, शुभ-कर्मों एवं नित्य प्रति के कार्य क्रमों का श्रवण तथा अवलोकन करके स्वयं भी अपने पिता का ही प्रतिबिम्ब बनते जा रहे थे। वीरता, शौर्य, पराक्रम एवं निर्भयता आदि गुण आपने अपने पिता से उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त किए। परोपकार, कोमलता, सुकुमारता आदि गुण आपने अपनी माता से ग्रहण किए। इस प्रकार आप पूर्णरूपेण धर्म-कर्मार्थ तत्पर थे। त्याग एवं बलिदान के भाव आपके अन्तःकरण में पर्याप्त दृढ़ थे। अभी आप बालक ही थे कि बहुधा आप सहज समाधि में लीन हो जाते थे। इन सम्पूर्ण गुणों ने आप में यह दृढ़ विश्वास उत्पन्न कर दिया कि मानव को अन्याय तथा उपद्रव के विरुद्ध डट जाना चाहिए और अपने अधिकार व न्याय के लिए सभी कुछ, यहां तक कि स्वयं का भी, बलिदान कर देना चाहिए। आपका दृढ़ विश्वास था कि गृहस्थ-मार्ग का त्याग करने के स्थान पर इसे प्रभु-स्मरण, भक्ति एवं लोक-सेवार्थ अर्पण करके अधिक उपयोगी तथा सफल बनाना चाहिए।

तेगबहादर जी की सगाई करतारपुर-निवासी लालचन्द की सुपुत्री बीबी गूजरी जी के साथ उस समय हुई जिस समय आपके ज्येष्ठ भ्राता सूरजमल का पाणि ग्रहण संस्कार हुआ। तेगबहादर जी विवाह के बन्धन से मुक्त रहना चाहते थे, परन्तु अपने पूज्य पिता की आज्ञा शिरोधार्य करते हुए उन्होंने विवाह के लिए स्वीकृति दे दी। तेग बहादर जी का शुभ-विवाह करतारपुर में गुरु-मर्यादानुसार हुआ।

सन् १६३५ के मध्य में जब गुरु हरिगोविन्द जी को करतार पुर में मुगल सेना ने काले खां तथा पैंधे खां के संयुक्त नेतृत्व में घेर लिया तब १४ वर्ष के तेग बहादर जी ने युद्ध में भाग लिया एवं बड़ी वीरता एवं निर्भयता के साथ सिद्धहस्त योद्धा की भांति खड्ग के जौहर दिखाए। इस दृश्य को आपकी पूज्य माता

नानकी जी अट्टालिका से देख रही थीं। वह पुलकित हो उठीं तथा उसने अपने शूरवीर सुपुत्र की वीरता और साहस की भूरि-भूरि प्रशंसा की। आगामी दस वर्ष आप, अपने गुरु पिता के स्वर्ग सिधारने (१६४४ ई०) तक कीरतपुर में रहे।

बाबा गुरदित्ता जी के अकाल निधन के उपरान्त गुरु हरिगोविन्द जी ने उनके ज्येष्ठ सुपुत्र धीरमल को करतारपुर से बुलवाया तथा आज्ञा दी कि वे श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी की "बीड़" लेकर कीरतपुर आ जाएं। गुरुजी धीरमल की एक बार परीक्षा लेकर "दस्तारबन्दी" की रस्म (प्रथा) पूरी करना चाहते थे। परन्तु बुलाने पर भी धीरमल न तो स्वयं ही आए तथा न ही गुरु ग्रन्थ साहिब जी की "बीड़" ही भेजी। अत: गुरु हरिगोविन्द जी ने हरि राय जी को योग्य व विनम्र सेवक समझकर उन्हें बाबा गुरदित्ता जी की "दस्तार" बंधवा दी इसके अनन्तर गुरु जी की कृपा दृष्टि सदैव हरिराय पर रही तथा वे हरिराय को "बाबा जी" नाम से सम्बोधित करते रहे एवं अन्त में "गुरुगद्दी" भी उन्हें ही प्रदान की।

गुरु हरिगोविन्द जी ने श्री हरिराय जी को गुरुगद्दी प्रदान करने के उपरान्त, स्वयं भौतिक शरीर त्यागने के पूर्व माता नानकी जी को अपने सुपुत्र (तेग बहादर जी) को साथ लेकर "बकाला" जाकर निवास करने का आदेश दिया। **गुर प्रताप सरज ग्रन्थ** (रास ८, अंशु ५७) के रचयिता भाई सन्तोख सिंह के अनुसार, बकाला में माता नानकी जी के पूज्य पिता भाई हरीचन्द जी निवास करते थे। अत: आज्ञा पाकर माता नानकी जी अपने शूरवीर सुपुत्र तेग बहादर के साथ कीरतपुर से बकाला आ गईं। इसके उपरान्त, लगभग बीस वर्ष (१६४४-१६६४ ई०) तेग बहादर जी ने गृहस्थ-जीवन बिताया। इस दौरान उन्होंने अपना अधिक समय प्रभु-भक्ति एवं प्रभु-स्मरण में व्यतीत किया। यह आपके अत्यन्त वैराग्य युक्त व उपरागता की पराकाष्टा का समय था। बकाला में गुरु जी द्वारा की आध्यात्मिक साधना अति महान् थी।

गुरु-गद्दी पर विराजमान होना

गुरु हरि कृष्ण जी ने भौतिक शरीर का त्याग करते समय दिल्ली में १६६४ ई० में भावी गुरु के सम्बन्ध में केवल दो सांकेतिक शब्दों का उच्चारण किया। वे शब्द थे "बाबा बकाले"। इन दो शब्दों का सांकेतिक अर्थ था कि भावी गुरु बकाले में विराजमान हैं तथा वे गुरु हरि कृष्ण के "बाबा" हैं। उस समय गुरु हरिगोविन्द जी के सुपुत्रों में से केवल तेग बहादर जी ही बकाले में निवास करते थे। परन्तु इन सांकेतिक शब्दों का लाभ उठाते हुए सोढी साहिबजादों ने अपनी-अपनी गद्दियाँ बकाले में स्थापित कर लीं तथा सभी स्वयं को गुरु कहलवाने लगे

और अपने मसन्दों द्वारा साधारण भोले-भाले सिक्खों को अपनी ओर प्रेरित करने में संलग्न हो गए। स्वयं को गद्दी का उत्तराधिकारी घोषित करने का सबसे अधिक दावा धीरमल ने किया। अब गुरु कौन हो, यह निर्णय करना कठिन हो गया। गुरु-व्यक्ति की पहचान एवं गुरु-पद के प्रगटाव सम्बन्धी अनेक कथाएं प्रचलित हैं। **"परचीआं सेवादास"** (पृष्ठ ८४) के अनुसार, मक्खण शाह लबाणा ने बाईस मंजीदारों की परीक्षा करके अन्त में तेग बहादर को वास्तविक गुरु के रूप में पहचाना और छत पर चढ़कर उच्च स्वर में कहा कि मैंने असली गुरु ढूंढ़ लिया है। **"परचीआं सेवादास"** के अनुसार मक्खण शाह गुरु जी का मसन्द था तथा टांडा लबाणा (जिला मुज़फराबाद, कश्मीर) का निवासी था।

यह घटना सिक्ख इतिहास में एक विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। इसके साथ गुरमत आदर्श के विकास के इतिहास में इस धारणा को बल मिला कि भक्तिपूर्ण एकान्तवास तथा कर्मशील लोकनायकत्व का परस्पर मेल धर्म की नवीन संकल्पना की स्थापना के लिए अत्यावश्यक है। अब गुरु तेगबहादर जी का व्यक्तित्व सिक्ख अनुयायियों के लिए प्रेरणा, नेतृत्व व आकर्षण का केन्द्र बन गया। बकाला में रौनक बढ़ने लगी तथा गुरुजी के दर्शनार्थ नित्य प्रति श्रद्धालु लोगों की भीड़ उमड़ने लगी। इसके साथ ही सोढी गुरुओं ने, जो पृथक्-पृथक् गद्दी बनाए बैठे थे, बकाला से जाना प्रारम्भ कर दिया। धीरमल ने गुरु जी के विरुद्ध कुछ कार्य किया, परन्तु अन्त में वह असफल होकर अपने घर लौट आया।

गुरु के रूप में (१६६४-१६७५ ई०)

गुरु गद्दी पर बैठने के उपरान्त गुरु साहिब श्री हरि मन्दिर साहिब के दर्शनार्थ अमृतसर गए। जब आप अमृतसर पहुंचे तथा पावन सरोवर में स्नानार्थ गए, तब मेहरबान तथा उनके सुपुत्र हरि जी के मसन्द श्री हरि मन्दिर साहिब के द्वार बन्द करके घरों को चले गए। गुरु जी ने बाहर से ही शीश झुकाकर प्रणाम किया तथा अकाल तख़्त के पास एक वृक्ष की छाया में विराजमान हो गए। यहां पर अब "गुरुद्वारा थड़ा साहिब" विद्यमान है। यहीं से आप शहर से बाहर की ओर चले गए तथा एक स्थान पर कुछ समय के लिए विश्रामार्थ रुक गए। यहां पर "गुरुद्वारा दमदमा" साहिब है। यहीं पर अमृतसर की जनता माताओं तथा बहनों के नेतृत्व में पहुंची तथा उसने मसन्दों के व्यवहार के लिए खेद व्यक्त किया और उनकी भूल को क्षमा करवाया। यहीं से नजदीक के ग्राम वल्ला की जनता गुरु जी को अपने गांव ले गई। गुरु जी ने माता हरिआं के घर में विश्राम किया। यहां पर भी पवित्र गुरुद्वारा बना हुआ है।

इसके अनन्तर गुरु साहिब कीरतपुर चले गए, जहां पर श्रद्धालु जनता ने आपका बहुत ही आदर सहित स्वागत किया। दर्शनार्थ एकत्रित हुए श्रद्धालुओं

को गुरु जी ने प्रभु-स्मरण, सदाचार, उद्यम, पारस्परिक भ्रातृ-भाव तथा सृजनात्मक कर्मशीलता आदि सिद्धान्तों का उपदेश दिया। गुरु जी के तेजस्वी व्यक्तित्व तथा चुम्बकीय प्रभाव ने श्रद्धालुओं के हृदय में श्रद्धा, विश्वास एवं सेवा की अभिलाषा की प्रेरणा भर दी। इसी बीच गुरु जी ने विलासपुर रियासत के परगना कहिलूर, माखो वाल आदि ग्रामों में ५०० रु० देकर जमीन खरीदी। उस स्थान पर नया गांव बसाने के लिए उसकी नींव खुदाई का कार्य बाबा बुड्ढा जी के सुपुत्र भाई गुरदित्ता जी के कर कमलों से करवाया गया। इसका नाम "चक माता नानकी" रखा गया जो बाद में श्री आनन्दपुर साहिब के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह घटना जून १९, १६६५ की है। इसी परम पावन स्थान पर गुरु गोविन्द सिंह जी ने "खालसा पन्थ" की स्थापना की।

धर्म-प्रचार

कुछ समय चक्र माता नानकी स्थान पर निवास करके पुन: गुरु तेगबहादर जी ने धर्म प्रचारार्थ मालवा एवं बांगर प्रदेशों की ओर प्रस्थान किया। इस पर्यटन का उद्देश्य जनता के अन्तःकरणों से भ्रम एवं अन्धविश्वास को दूर करना एवं उनके हृदयों में सत्य, सदाचार की पालना आदि गुणों के प्रति उत्साह उत्पन्न करना था। सबसे पहले वे सैफ़ाबाद (बहादरगढ़, पटियाला) पहुंचे। यहां पर आप एक उपवन में कुएं के समीप ठहरे। यहां पर अब गुरुद्वारा बहादरगढ़ सुशोभित है। यहां पर आप वर्षा ऋतु पर्यन्त रहे। **मालवा देश रटन साखी पोथी** में लिखा है :

> तिस कसबे का मालक शरफ़ दीन (सैफ खाने) था। बड़ा नेक मरद हैसी, दिल का साफ हैसी। तिसने भी सुनिआ जो तेग बहादर साहिब बाग बीच उतरे हैनि। बड़ा खुस होआ। उसी बखत लै करके मेविओं की डालीआं, लंगर नूं रसत मंगवाइ, आप गुरू जी नू आइ मथा टेकिआ। कहिण लगा : "गुरू जी ! आज मेरा जनमु सफल हुआ।" फेर शरफ़ दीन कहा : "गरीब निवाज़ जी डेरा अन्दर करीए।" गुरूजी बचन कीआ : "डेरा इसी जागा बहुत बेश (वधीआ) है।"

एक दिन सैफ़ खान गुरु जी के दर्शनार्थ आया। गुरु जी ने ये उपदेशात्मक वचन कहे :

> साहिब नूं हरदम याद रखणा, साध फकीर की सेवा बन्दगी करनी; मन नीवाँ रखणां तुसा नूं सदा ही आनन्द रहेगा।

सैफ़ खान ने गुरु जी को विदा करते समय सहभोज के लिए वर्तन, तम्बू, ऊंट, घोड़े एवं रथ भेंट किए। यहां से गुरुजी मालवा देश की ओर चले गए।

आप जहां भी जाते, वहां जनता के कष्ट निवारणार्थ कुएं, बावली, तालाब आदि खुदवाते जाते जिससे लोगों को जल की कमी का कष्ट न हो। सुबुद्धि एवं ज्ञान का मार्ग दिखाते हुए तथा कुमति का निवारण करते हुए, पारस्परिक प्रेम, मैत्री तथा सेवा भाव के गौरव को दृढ़ करते हुए आप कई ग्रामों, प्रान्तों एवं नगरों में धर्म-प्रचारार्थ भ्रमण व पड़ाव करते हुए तालवंडी (दमदमा साहिब) पहुंचे। जहां तक उस समय की स्थिति के धार्मिक, आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक पक्ष का सम्बन्ध है, यह कहा जा सकता है कि राजसत्ता के सामन्ती कार्यकर्त्ताओं (क़िरदारों) के साथ-साथ धर्म एवं आध्यात्मिकता के जो नामधारी नेता एवं पीर थे वे भी एक प्रकार के दम्भी, घमण्डी, कपटी तथा मिथ्याचारी व्यक्ति थे, और वे समाज विरोधी कार्यों में लीन थे। इस सम्बन्ध में कई उदाहरण मिलते हैं कि कनफटे योगी, सुलतानीए एवं रौशनीए पीर सरल स्वभाव वाले साधारण लोगों को भ्रमित व भयभीत करके अपने छल कपट के पाश में फंसा लेते थे। जन साधारण को सरल, सीधे तथा सत्य मार्ग पर चलाने की अपेक्षा वे उन्हें नाटक चेटकों के इन्द्रजाल द्वारा भयभीत करके अपना अनुयायी बना लेते थे। सच तो यह है कि ये योगी व पीर धर्म एवं आध्यात्मिकता की आड़ में कर्मशील लोगों का शोषण करते थे। मौड़ ग्राम में देव निकालने की कथा एवं देसू को सुलतानी पीर के चंगुल से छुटकारा दिलवाने आदि की घटनाओं से स्पष्ट हो जाता है कि जब राजसत्ता एवं नामधारी दिखावटी धार्मिकता लोक-शोषण का विकराल प्रतीक बनी हुई थी, तब गुरु तेगबहादर ने सत्य, पवित्र, पावन तथा ज्ञान-प्रदीप्त मानवता का सिद्धान्त प्रस्तुत किया। अपने क्रियात्मक उदाहरण द्वारा गुरुजी ने यह स्पष्ट कर दिया कि सत्य, शुद्ध व वास्तविक गुरु जन साधारण का नेता होने के साथ-साथ उनका मित्र, सखा एवं सहायक भी है। गुरुजी ने हडिआइआ ग्राम के पोखर (छप्पड़) की सफाई में स्वयं भाग लिया एवं अपने हाथों से अपना काम करने की प्रथा स्थापित की। यह भारत के धार्मिक एवं व्यावहारिक इतिहास में एक नवीन लोकवादी प्रथा थी। तलवंडी से प्रस्थान करके गुरुजी बांगर देश में प्रचार करते हुए धमतान साहिब पहुंचे।

मालवे एवं बांगर के देशों में जहां-जहां गुरु साहिब गए, वहां-वहां मानव-जीवन में सोच-विचार, व्यवहार, सहकारिता एवं पारस्परिक मित्रता की नवीन धारा प्रवाहित होती गई। गुरुजी के प्रति लोगों की श्रद्धा में वृद्धि तथा जन साधारण को उनकी ओर आकर्षित होते देखकर ब्राह्मण, मुल्लां, काजी तथा सुलतानी पीर सभी उनसे दुःखी थे। इन सबने बादशाह के पास गुरुजी के विरुद्ध शिकायत की और कहा कि गुरुजी किसी विशेष धर्म के नेता एवं आगू नहीं, अपितु वे प्रचलित रीति-रिवाज व राजसत्ता के विरोधी हैं। शिकायत को सुनते ही बादशाह ने पठान आलमखान को आदेश दिया कि वह गुरु साहिब को दरबार में उपस्थित

करे। पठान दिल्ली से धमतान साहिब आया तथा बादशाह का आदेश सुनाकर गुरुजी को दिल्ली ले गया। बहुत से सिक्ख एवं श्रद्धालु लोग भी गुरुजी के साथ थे। इस तथ्य की पुष्टि भटवही (जादव बंसीओं की) से होती है। सम्बन्धित उद्धरण इस प्रकार है :—

"गुरु तेग बहादरजी महल नौवे को नगर धमतान परगना बांगर से आलम खान रुहेला शाही हुकम गैलदिली को लैकर आइआ··· साथ···होर सिख फकीर आए।"

नवम्बर १६६५ में आप दिल्ली पहुंचे जहां पर आपको कंवर रामसिंह के महल में रखा गया। कंवर ने बादशाह को सूचित किया कि गुरु साहिब दरवेश फकीर हैं, जो एकमात्र परमात्मा के उपासक हैं तथा अद्वैत परमात्मा की उपासना की शिक्षा देते हैं। इस पर बादशाह ने गुरुजी के विरुद्ध अन्य कोई कार्यवाही करनी उचित नहीं समझी।

गुरुजी दिल्ली से मथुरा, वृन्दावन होते हुए आगरा पहुंचे जहां पर उन्होंने माता जस्सी के घर में निवास किया। यह स्थान "गुरु-द्वारा माई थान" के नाम से प्रसिद्ध है। आगरा से इटावा, कानपुर तथा फतहपुर होते हुए वे प्रयाग (इलाहाबाद) पहुंचे। प्रयाग में आप कुछ माह के लिए रुके तथा पर्याप्त दान किया। इसका संकेत "बिचित्र नाटक" में इस प्रकार है :—

"जब ही जात त्रिवेणी भए।। पुंन दान दिन करत बिताए।।"

यह घटना मार्च १६६६ ई० की है। प्रयाग में जहां पर गुरुजी ने निवास किया, वहां पर इस समय "गुरुद्वारा पक्की संगत" विद्यमान है। यहां से आप जरनैली सड़क पर गंगा के दक्षिण तट के साथ-साथ चलते हुए सर्वप्रथम काशी आए। यहां पर आपकी याद में "गुरु द्वारा बड़ी संगत" विद्यमान है। काशी में गुरु नानक देवजी भी आए थे तथा भाई गुरदास जी तो यहां काफ़ी समय ठहरे थे।

बनारस से सहसराम तथा गया होते हुए अन्त में मई १६६६ में गुरुजी पटना पहुंचे। यहां पर आपने चौमासा काटा। यहां पर आपके दर्शनार्थ बंगाल तथा आसाम से लोग आते रहे। परिवार को यहीं छोड़कर गुरुजी ने आसाम की ओर प्रस्थान किया। पटना से मुंगेर, भागलपुर, कोल गांव, राजमहल, कन्त नगर और मालदा होते हुए वे ढाका पहुंचे। रास्ते में राजशाही और पबना आदि स्थानों पर रुके। आप जनवरी १६६८ ई० में ढाका पहुंचे। यहां पर आसाम की ओर जाते समय राजा राम सिंह से आपकी भेंट हुई। ढाका से राजा राम सिंह के साथ गुरुजी ने दिसम्बर १६६८ में आसाम की ओर प्रस्थान किया।

ब्रह्मपुत्र नदी पार करके फरवरी १६६९ में आप धूबड़ी पहुंचे। यहां से आप

तेगपुर (हाजो, गोहाटी) गए। यह स्थान गुरुजी की पूर्वी यात्रा का अन्तिम पड़ाव था।

इसी मध्य औरंगजेब ने १६६९ में एक विशेष आदेश जारी किया, जिस द्वारा पृथक् पृथक् प्रान्तों के शासकों को चेतावनी दी गई कि मुसलमानों के अतिरिक्त अन्य धर्मों के लोगों के मन्दिर, पाठशाला आदि तोड़ दिए जाए। पंजाब की आन्तरिक अवस्था भी चिन्ताजनक थी, प्रत्येक कोने में हाहाकार मची हुई थी। ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाने के कारण गुरुजी ने एकदम वापिस आनन्दपुर पहुंचना उचित समझा।

गुरुजी की पूर्वी यात्रा सिक्ख इतिहास में एक विशेष महत्त्व रखती है। इस यात्रा के फलस्वरूप स्थान-स्थान पर गुरुद्वारे स्थापित हो गए जो आज तक विशेष गुरमत विचार व संस्कृति के प्रचार व प्रसार के केन्द्र बन रहे हैं।

सीस दीआ पर

यह एक ऐतिहासिक वास्तविकता है कि श्री तेग बहादुर जी ने धर्म हित आत्म बलिदान दिया। यह अद्भुत असाधारण साका साधन-हेतु किया गया। इस सम्बन्ध में श्री गुरु गोविन्द सिंह जी ने इस प्रकार कहा है :—

तिलक जंञू राखा प्रभ ताका ॥
कीनो बड़ो कलू महि साका ॥
साधिन हेति इती जिनि करी ॥
सीसु दीआं पर सी ना उचरी ॥

(बिचित्र नाटक)

स्पष्टीकरण हेतु यह लिखना उचित ही है कि गुरु तेग बहादर जी जब आनंद पुर वापिस आए, तो इस देवपुरी की शान अधिक बढ़ गई। औरंगजेब ने अपनी शासन नीति को सुचारु रूप से चलाने एवं अपनी स्थिति को दृढ़ करने के लिए धार्मिक जीवन व धार्मिक व्यवहार सम्बन्धी जो फैसला किया, वह हिन्दू धर्म तथा हिन्दू-धर्मावलम्बियों को सर्वथा पीड़ित करनेवाला था।

मासरे-आलम-गीरी में लिखा है कि बादशाह औरंगजेब ने अप्रैल ९, १६६९ ई० को हिन्दुओं के मठ व मन्दिर तोड़ देने के आदेश की घोषणा की। इसके साथ ही उसने हिन्दू धर्म की शिक्षा व पाठ पूजा पर प्रतिबन्ध लगा दिया।

बादशाह ने इच्छा व्यक्त की कि इस्लाम धर्म का प्रचार भली भांति किया जाए। इस आदेश का पालन तुरन्त प्रारम्भ हो गया। भारत में प्रसिद्ध बनारस का विश्वनाथ का मन्दिर एवं मथुरा का केशवराय मन्दिर शीघ्र ही इस आदेश के ग्रास बन गए। सभी सूबेदारों ने इस राजाज्ञा का पालन करना प्रारम्भ कर दिया। बूड़ीए में सिक्खों का गुरुद्वारा भी खण्डहरों में परिणत कर दिया गया।

अधिकतर पण्डितों को इस्लाम स्वीकार करने के लिया बाध्य किया गया। सर-कार का विचार था कि पण्डितों के इस्लाम में प्रवेश करने के साथ शेष सम्पूर्ण हिन्दू जनता मुसलमान बनने के लिए तैयार हो जाएगी। इस विचार को समक्ष रखते हुए कश्मीर के सूबेदार इफ़तिखार खां ने कश्मीरी पण्डितों को मुसलमान बनाने के कार्य में पूरा बल लगा दिया। पण्डित कृपा राम के नेतृत्व में कश्मीरी पण्डितों की व्यथा की गाथा सुनाने के लिए एक दल गुरु तेगबहादरजी की सेवा में उपस्थित हुआ। पण्डितों के दुःख की कथा बहुत लम्बी, दुःखपूर्ण एवं हृदय विदारक थी। **"शहीद विलास भाई मनी सिंह जी"** में कवि सेवासिंह का कथन है—

दुखीए विप्र जु चलके आए पुरी अनन्द ॥
बांहि असाडी पकरीए गुरु हरि गोबिंद के चंद ॥
हाथ जोर कहियो किरपा राम ॥
दत ब्राह्मण मटन ग्राम ॥
हमरो बल अब रह्यो नहि काई ॥
हे गुर तेग बहादर राई ॥…
फिरत फिरत प्रभ आए थारे ॥
थाक परे हउ तउ दरबारे ॥
सेवा हरी इम अरज गुजारी ॥
तुम कलजुग के कृशन मुरारी ॥
गुर दर ते इम विप्र ने बिरथा कही सुनाइ ॥
अवर वासना नाहि प्रभ तक्की तउ सरनाइ ॥

(पृष्ठ, ५९-६०)

इस कथन का समर्थन भटवही के निम्नलिखित शब्दों से भी होता है:—

"किरपा राम बेटा अड़ूराम की पोता नरैणदास का, पड़पोता ब्रह्मदास का बनस ठाकुर दास की भारदवाजी गोत्रा सारसुत दत्त ब्राह्मण बासी मटन परगना सिरीनगर देस कशमीर खोड़समुखी (सोलह) ब्रह्मनों को संग लैके चक नानकी आइआ, परगना कहि-लूर मैं, समत सुतरै सै बत्तीस जेठ मासे सुदी, इकादसी के दिहु (जेठ सुदी इकादस संमत १७३२)।"

भट्टवही तलउडा

गुरु तेग बहादर जी ने यह घोषित किया कि इस समस्या के निवारणार्थ किसी महापुरुष के शीश-दान की आवश्यकता है। समीपस्थ साहिब जादा गोबिन्द राय

ने स्वाभाविक रूप में कह दिया "गुरु पिता गुरु देव ! आपसे अधिक महान् अन्य कौन व्यक्ति हो सकता है ?"

मुग़ल शासन काल में यह एक निश्चित प्रणाली थी कि स्थानक पत्रकार (अख़बार नवीस) नित्य प्रति की स्थिति व घटनाओं का विवरण सरकार को भेजते रहते थे। गुरु तेगबहादर पूर्ववर्ती गुरुओं की मर्यादा के अनुसार लोक-हित, लोक-धर्म एवं लोक-कल्याण के प्रतिनिधि एवं प्रतीक थे। गुरुजी का जीवन-व्यवहार एवं उपदेश जहां जन-साधारण को सत्य, पारस्परिक सहयोग एवं सहकारिता की ओर प्रेरित करता था, वहां इसके साथ-साथ वह दृढ़ता एवं निर्भयता की युक्ति भी सिखाता था। औरंगजेब अपने आपको धर्म का शक्तिशाली एवं सबसे महान् संरक्षक सिद्ध करना चाहता था। इस प्रयोजन को सिद्ध करने के लिए उसने उपर्युक्त नीति को लक्ष्य बनाया। परन्तु फिर भी उस समय की स्थिति की विषमता को समझने के लिए यह ध्यान में रखना उचित होगा कि जहां औरंगजेब की नीति का मुख्य लक्ष्य मुसलमान धर्म से भिन्न अन्य धर्मों का उन्मूलन करना था, वहां गुरु तेगबहादर के जीवन, व्यवहार एवं प्रचार का लक्ष्य था निजी धर्म में दृढ़ता पूर्वक स्थिर रहना। दूसरे शब्दों में, गुरु तेग बहादर का व्यक्तित्व, चिन्तन, साधना व धर्म व्यवहार औरंगजेब की नीति के पूर्ण विरोध का प्रतीक था। इसके साथ ही एक अन्य महत्त्वपूर्ण व गंभीर वास्तविकता है जिसे स्मरण रखना अत्यावश्यक है। शेख अहमद सरहंदी, जो नक्शबन्दी सिलसिले का एक महत्त्वपूर्ण पीर था, ने गुरु अर्जनदेव जी की शहीदी के समय अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट करते हुए इस घटना को नास्तिकता (कुफ़्र) की पराजय कहा था शेख अहमद सरहंदी ने अपने पत्रों (मकतूबात) में जो विचार प्रकट किए, वे उसकी धार्मिक कट्टरता, संकीर्णता एवं घृणा को प्रमाणित करते हैं। प्रोफेसर असलम का कथन है कि शाहजहां की जानशीनी के समय उसके पुत्रों में जो झगड़ा हुआ था, उसमें नक्शबन्दी सिलसिले के कई हज़ार श्रद्धालुओं ने स्वेच्छापूर्वक औरंगजेब की सहायता की थी। औरंगजेब सदैव सरहन्द के नक्शबन्दी गद्दीदार के प्रति श्रद्धा एवं आस्था की भावना रखता था। अत: यह परिणाम निकालना ग़लत नहीं होगा कि औरंगजेब की कट्टर संकीर्ण धार्मिक नीति को तीव्र करने में मुजदिद्दी सिलसिले वालों ने पूरी शक्ति के साथ सहयोग दिया होगा।

कश्मीरी पण्डितों ने गुरुजी के स्पष्ट संकेत के अनुसार वापिस लौटकर सरकारी कर्मचारियों को कह दिया कि गुरु तेगबहादर जी हमारे धर्मगुरु हैं, जो कुछ वे करेंगे वही हम करेंगे। गुरु तेगबहादर जी का धर्म ही हमारा धर्म होगा। हम उन्हीं के द्वारा प्रदर्शित मार्ग का अनुसरण करेंगे।

राज्य के मद में चूर सत्ताधारियों ने अधिकार, न्याय, मानवता एवं सच्चाई की आवाज़ कभी नहीं सुनी। गुरु तेगबहादरजी की सचाई, न्याय, सहकारिता एवं

पारस्परिक मैत्री की आवाज़ को सुन कर भी सत्ताधारियों के अन्तःकरण प्रभावित नहीं हुए। राज्यसत्ता ने बलपूर्वक अत्याचार एवं उत्पीडन के कठोर से कठोर, तथा दृढ़-से-दृढ़ साधन अपनाने का निश्चय कर लिया। इस निश्चय के अन्तर्गत पहला कदम यह उठाया गया कि गुरु तेगबहादर जी को, जो धर्म-प्रचार करते हुए शाही आदेश की प्रतीक्षा कर रहे थे, बन्दी बनाकर दिल्ली ले जाया गया। इतिहास इस बात का साक्षी है कि शासन सत्ता ने अपना पक्ष मनवाने के लिए सदा जुल्म, सितम एवं अन्याय के साधन को अपनाया, परन्तु जिन महापुरुषों का सम्पूर्ण जीवन ही सत्य स्वरूप है वे सत्य के प्रदर्शन व सत्य की घोषणा से कभी भी विचलित नहीं किए जा सकते। शासन की शक्ति सत्य की आवाज को बन्द करने में कभी भी सफल नहीं हुई। शासन के पास आज्ञाकारी कर्मचारी होते हैं जो सदैव खड्गों एवं भालों से सुसज्जित रहते हैं जिन्हें देखकर साधारण मानव भयभीत हो जाता है, परन्तु जिन महापुरुषों का जीवन निर्भय प्रभु के चरण कमलों में लीन हैं और जिनकी समाधिस्थ दृष्टि में सर्वदा एक अद्वैत परमात्मा का प्रकाश रहता है, वे अपने आदर्श में दृढ़ रहते हैं। दिल्ली में सत्ताधारिओं ने अपनी शक्ति के विकराल रूप के प्रदर्शन का प्रत्येक सम्भव प्रयत्न किया। गुरुजी के साथ उनके कुछ सेवक भी थे, जिनमें से भाई मतीदास को आरे के साथ चीर कर दो टूक कर दिया गया, भाई दिआल जी को खौलती देग में शहीद किया गया एवं भाई सतीदास का अंग-अंग काट डाला गया। गुरुजी को जो कष्ट दिए गए उनका वर्णन कोइर्रसिंह ने अपनी "**गुरु बिलास पातशाही—१०**" में इस प्रकार किया है—

थंभ तपावत लोह के नीर देत नहि रंचत।
तपत अधा मुख करत है रेत तपत अतयन्त॥

(अध्याय, ४)

शासन द्वारा प्रदत्त घोर यातनाएं, प्रलोभन, सत्य स्वरूप तथा धर्म मूर्ति गुरु जी की तेजस्वी अटलता, दृढ़ता एवं अडोलता के समक्ष व्यर्थ ही सिद्ध हुई। अन्त में स्पष्टतः कहा गया कि या कोई करामात दिखाओ अथवा इस्लाम धर्म स्वीकार करो। गुरु तेगबहादर जी ने दोनों बातें मानने से इनकार कर दिया। इस पर शासन सत्ता ने अन्तिम कदम उठाया; जल्लादों को आदेश दिया गया, खड्ग चमकी तथा प्रकाश पुंज शीश धड़ से अलग होकर धरती को पवित्र बना गया। इस घटना का वर्णन गुरु गोविन्दसिंह जी ने अपने शब्दों में इस प्रकार किया है :

ठीकरि फोरि दिलीसि सिरि प्रभपुर कीआ पयान॥
तेग बहादर सी क्रिआ करी न किनहू आन॥
तेग बहादर के चलत भयो जगत को सोक॥
है है है सभ जग भयो जै जै जै सुर लोक॥

गुरु तेगबहादर जी का आत्म-बलिदान, धर्म, सत्य, सदाचार, स्वतन्त्रता तथा

मानवता के शाश्वत पवित्र मूल्यों की अमरता का एक ऐसा प्रतिबिम्ब है जो इतिहास में सदैव जगमगाता रहेगा।

महान् आत्म बलिदान के परिणाम :

गुरु तेग बहादर जी के आत्म-बलिदान के फल-स्वरूप पर-शासित जनता के हृदयों में एक ऐसी क्रान्ति-भावना पैदा हुई कि उसने स्व-प्रदर्शन एवं स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए कर्म-मार्ग को अपनाया तथा "सिर हथेली पर रखकर" इस मार्ग पर विचरण करते हुए, आत्म बलिदान दिए, प्राणों की बलि दी तथा दुःख व कष्ट सहारते हुए सिक्खी धर्म में दृढ़ व अडोल रहे। वह अटल दृढ़ता, जो गुरु तेगबहादर जी की शहीदी ने अन्तःकरण को स्पर्श करके पैदा की शासन के जुल्म के समक्ष चट्टानवत् अचल तथा अटल सिद्ध हुई। उस शासन व्यवस्था ने जनता को स्वतन्त्रता, सहकारिता, पारस्परिक मित्रता, एवं सर्वव्यापी मानवता के अधिकारों से वंचित रखने में अपनी महत्ता समझी। गुरु तेगबहादर जी का आत्म-बलिदान शासन एवं भेदवादी समाज के अत्याचारों के विरुद्ध, धर्म-आधारित सचाई की बगावत तथा विजय थी।

गुरु वाणी विचार

गुरु तेगबहादर जी की वाणी श्री गुरु ग्रन्थ साहिब में संकलित है। यह वाणी सम्पूर्ण गुरु वाणी के क्रम एवं योजना के अनुसार रागों में बद्ध है। गुरु तेग बहादर जी की वाणी के अन्तर्गत ५९ शब्द तथा ५७ श्लोक हैं जिन्हें भोग (पाठ समाप्ति) के श्लोक भी कहा जाता है। जहां तक आध्यात्मिकता, नैतिकता, ज्ञान, आदर्श व साधना का सम्बन्ध है। गुरुजी की वाणी समस्त गुरु वाणी के साथ एक स्वर है। गुरमत में यह मान्यता सर्वस्वीकृत है :

जोति ओहा जुगति साइ सहि काइआ फेरि पलटीऐ ...॥ २॥
(रामकली वार राइ बलवंड़ि पृष्ठ ९६६)

कहने का भाव यह है कि गुरु—व्यक्ति एक ही पावन ज्योति तथा एक ही मर्यादा के संचालक एवं संस्थापक थे। गुरु तेगबहादर जी के अनुसार परमात्मा या अकाल पुरुष अथवा परमेश्वर उच्चतम, पावनतम तथा निरपेक्ष सत्य है जिसकी गति एवं सीमा का अनुमान मानव की सामर्थ्य के बाहर है। योगी, यति, तपस्वी एवं अन्य साधक उस परम तत्त्व के मर्म को समझने व प्राप्त करने का यत्न करते हैं। वह परम तत्त्व सर्वशक्तिमान सर्वव्यापी तथा सर्वजगत् का कर्त्ता है। छोटे को बड़ा एवं बड़े को छोटा, राव को रंक तथा रंक को राव, हल्के को भारी व भारी को हल्का बना देना उसका स्वाभाविक चमत्कार है। दृश्यमान जगत में जो घटनाएं घटित होती हैं, जो स्थितियां अस्तित्व में आती हैं, नामों व रूपों का जो

परिवर्तन घटित होता है, इस सबका कर्त्ता वह अकाल-पुरुष परमात्मा है। यह सम्पूर्ण सृष्टि प्रसार उसने स्वयं फैलाया है। वह अलक्ष्य, अपार व निरंजन हैं जो दृश्यमान जगत् का स्रष्टा है, परंतु वह इन सबसे अतीत एवं निर्लिप्त है।

धर्म पर आधारित विचार एवं संस्कृति में दो धाराएं प्रमुख होती आस्तिक एवं नास्तिक। इस बात को अधिक स्पष्ट करने के लिए यह कहना उचित है होगा कि संसार के प्रमुख धर्मों में जो धर्म परम सत् एवं परमेश्वर के अस्तित्त्व को स्वीकार करते हैं वे आस्तिक हैं तथा जो धर्म परमेश्वर के अस्तित्त्व को नहीं, स्वीकार करते वे नास्तिक हैं। आस्तिक धर्म-चेतना के अनुसार मानव जीवन का प्रमुख प्रयोजन व उद्देश्य प्रभु अथवा परमेश्वर की प्राप्ति है। इस प्राप्ति को परम धाम भी कहा जाता है। प्रभु की प्रीति मानव मन की स्वाभाविक, सत्य एवं वास्तविक आकांक्षा होती है। परन्तु इस आकांक्षा की पूर्ति के लिए अथवा अन्तिम प्रयोजन की प्राप्ति के लिए साधना के जो मार्ग अपनाए गए, वे पृथक्-पृथक् थे। भारतीय साधना के इन विभिन्न मार्गों में से योग मार्ग एक विशेष महत्त्वपूर्ण मार्ग माना जाता है। जो व्यक्ति योग से सम्बन्धित बाह्य भेष धारण करता है, परन्तु उसका मन पराई निन्दा व स्तुति में संलग्न रहता है तथा जिसका मन भटकता रहता है, ऐसा योगी प्रभु-प्राप्ति के मार्ग की युक्ति नही जानता। आध्यात्मिक जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए गृह व गृहस्थ जीवन का त्याग करके वनों में जाने की आवश्यकता नहीं। गुरुजी उपदेश देते हैं कि जंगल व वन में जिसकी खोज करने जाते हो वह निरपेक्ष प्रभु निर्लिप्त है, तथा सर्वव्यापी व प्रत्येक हृदय में निवास करता है। परम सत्य व दृश्यमान जगत् के परस्पर सम्बन्धों को स्पष्ट करने लिये गुरुजी ने उस परम तत्त्व की सर्वव्यापकता के रहस्य को स्पष्ट तथा मार्मिक शैली द्वारा इस प्रकार व्यक्त किया है कि जिस प्रकार फूल में सुगंध है एवं दर्पण में प्रतिबिम्ब है, उसी प्रकार परम सत्य प्रत्येक स्थान एवं कण-कण में विद्यमान है। उसकी खोज के लिए दृष्टि को अन्तःजगत् की ओर केन्द्रित करने की आवश्यकता है।

गुरु तेगबहादरजी के उपदेशानुसार साधना के दो महत्त्वपूर्ण पक्ष हैं प्रपत्ति एवं गुण गायन। प्रपत्ति का अर्थ है प्रभु की शरण में जाना जो व्यक्ति मन वचन-कर्म सहित स्वयं को प्रभु के चरणों में समर्पित कर देता है वह उत्ताम पदवी को प्राप्त कर भवसागर पार कर जाता है। मानव सदैव सुख का इच्छुक है। उसकी सम्पूर्ण कार्य-शक्ति इस बात पर केन्द्रित रहती है कि दुःख से मुक्ति तथा सुख की प्राप्ति कैसे हो ? गुरु तेगबहादर जी के अनुसार नाम स्मरण से ही सुख की प्राप्ति सम्भव हो सकती है। गुरुजी के वचन हैं :

हरि को नामु सदा सुखदाई ॥
जा कउ सिमरि अजामलु उधरिओ गनिका हू गति पाई ॥१॥ रहाउ ॥

पंचाली कउ राज सभा महि रामनाम सुधि आई ॥
ता को दूख हरिओ करुनामै अपनी पैज बढ़ाई ॥१॥
जिह नर जसु किरपा निधि गाइओ ता कउ भइओ सहाई ॥
कहु नानक मै इही भरोसै गही आनि सरनाई ॥२॥१॥

(मारू महला ९-१, पृष्ठ १००८)

गुरुजी की वाणी में सचाई-पूर्ण जीवन की जो संकल्पना मूर्तिमान की गई है, उसके अनुसार प्रभु का गुण-गायन ही उत्तम व पवित्र साधन है। जो व्यक्ति संसार की रंग-रलियों में व्यस्त व लीन रहते हैं, अनेक प्रकार के विषय-विकारों में आसक्त होकर जीवन के बहुमूल्य भाग यौवन काल को व्यर्थ नष्ट करते हैं वे अपने सम्पूर्ण जीवन को ही नष्ट कर लेते हैं। जो व्यक्ति तत्त्व ज्ञान से वंचित है वे धन, स्त्री, सांसारिक पदार्थों आदि को ही जीवन की सार्थकता का ठोस आधार मान लेते हैं। परंतु जिन साधकों ने साधना द्वारा आध्यात्मिक मति की स्थिरता प्राप्त की है, वे अपनी वृत्तियों को क्षणभंगुर वस्तुओं से हटाकर एक मात्र प्रभु स्मरण एवं उसके गुण-गायन में केन्द्रित कर लेते हैं। ये वे व्यक्ति होते हैं जो सुख-दुःख, मान-अपमान, हर्ष-शोक, काम-क्रोध, एवं लोभ-मोह से अतीत व विरक्त होते हैं तथा इस कठिन साधना द्वारा निर्वाण-पद को प्राप्त कर लेते हैं। गुरु तेग बहादर जी के अनुसार उत्तम व्यक्ति के आचरण व्यवहार की विशेषता यह है कि वह प्रत्येक व्यक्ति के अस्तित्त्व में परम तत्त्व के प्रकाश की झलक देखता है, एवं, इस प्रकार, प्रत्येक व्यक्ति को सम्मान व सत्कार का अधिकारी समझता है। इस प्रकार के उत्तम व्यक्तित्व वाला व्यक्ति न तो किसी से भयभीत होता है एवं न ही किसी को भय-भीत करता है। गुरु-वाक् है :

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आनि ॥
कहु नानक सुनु-रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥१६॥

(सलोक महला ९, पृष्ठ १४२७)

यदि व्यष्टिगत व्यक्तित्व तथा सामूहिक व्यक्तित्व का निर्माण व गठन उपर्युक्त गुरु-वाक् अनुसार किया जाए, तो फिर इस प्रकार का वातावरण सम्भव हो सकता है जहां कोई शत्रु अथवा पराया नहीं होगा, जहां सहयोग, पारस्परिक मित्रता एवं सहकारिता का स्वच्छ प्रेम प्रकाशित होगा।

गुरुवाणी भावार्थ सहित

गुरु तेग बहादर जी द्वारा रचित वाणी का विवरण

राग	शब्द
गउड़ी	६
आसा	१
देवगंधारी	३
बिहागड़ा	१
सोरठि	१२
धनासरी	४
जैतसरी	३
टोडी	१
तिलंग	३
बिलावलु	३
रामकली	३
मारू	३
बसन्तु	५
सारंग	४
जैजावन्ती	४

योग ५६ शब्द

सलोक (श्लोक) ५७

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

रागु गउड़ी महला ६ ॥

साधो मन का मानु तिआगउ ॥

हे सन्त जनो ! अपने मन का अहंकार (मान) त्याग दो।

कामु क्रोधु संगति दुरजन की ता ते अहिनिसि भागउ ॥१॥ रहाउ ॥

काम, क्रोध और दुष्ट जनों (दुर्जन) की संगति से सदा (दिन रात) दूर भागो।

सुखु दुखु दोनो सम करि जानै अउरु मानु अपमाना ॥
हरख सोग ते रहै अतीता तिनि जगि ततु पछाना ॥१॥

जो सुख-दुख, मान-अपमान दोनों को समान समझता है, और हर्ष तथा शोक से निर्लिप्त (अनासक्त) रहे, केवल ऐसे पुरुष ने संसार में परम तत्त्व को जान लिया है।

अतीता—सांसारिक बन्धनों से मुक्त, निर्लेप, असंग, अनासक्त।

ततु—सार, परम तत्त्व।

उसतति निंदा दोऊ तिआगै खोजै पदु निरबाना ॥

स्तुति व निन्दा दोनों का त्याग करे तथा निर्वाण पद (मोक्ष) की खोज करे।

जन नानक इहु खेलु कठनु है किनहूं गुरमुखि जाना ॥२॥१॥

यह साधना (खेल) अति कठिन है। कोई विरला गुरुमुख ही इसे प्राप्त कर सकता है।

गुरमुखि—गुरु वाणी में दीक्षित, अन्तर्मुखी, गुरुवाणी में निरत, गुरु की ओर मुख वाला।

साधो रचना राम बनाई ।।

हे सन्त जनो ! (संसार की) रचना प्रभु ने बनाई है।

इकि बिनसै इक असथिरु मानै अचरजु लखिओ न जाई ।।१।।रहाउ ।।

एक इसे नश्वर समझता है तो अन्य इसे सदा स्थिर (स्थायी) समझता है। इस आश्चर्य का वर्णन कोई नहीं कर सकता है।

काम क्रोध मोह बसि प्रानी हरि मूरति बिसराई ।।

काम-क्रोध और मोह के वशीभूत प्राणी (जीव) ने प्रभु को भुला दिया है।

झूठा तनु साचा करि मानिओ जिउ सुपना रैनाई ।।१।।

रात्रि के स्वप्न के समान नाशवान् (अस्थिर) शरीर को स्थिर (सत्-सदा स्थायी) मान लिया है।

जो दीसै सो सगल बिनासै जिउ बादर की छाई ।।

जो दृश्यमान है वह सब बादल की परछाई के समान विनष्ट हो जायगा।

जन नानक जगु जानिओ मिथिआ रहिओ राम सिरनाई २।।२।।

प्रभु-भक्त ने जग को नश्वर समझ कर ईश्वर की शरण में सदा निवास लिया है।

प्रानी कउ हरि जसु मनि नही आवै ।।

जीव को प्रभु-यश की याद नहीं आती।,

अहिनिसि मगनु रहै माइआ मै कहु कैसे गुन गावै ।।१।।रहाउ।।

सदा (दिन रात) माया के नशे में लीन रहता है। (इस कारण) बतलाओ, प्रभु का गुण गान कैसे करें ?

पूत मीत माइआ ममता सिउ इह बिधि आपु बंधावै ।।

पुत्र, मित्र और माया की ममता से ऐसे (व्यर्थ, अकारण) ही स्वयं को बंधवा लेता है।

म्रिग त्रिसना जिउ झूठो इहु जग देखि तासि उठि धावै ।।१।।

मृग-तृष्णा के समान यह संसार मिथ्या (नश्वर) है, परन्तु प्राणी (इस के विषयों में आसक्त होकर) इसके पीछे दौड़ता फिरता है।

सुगति मुकति का कारनु सुआमी मूड़ ताहि बिसरावै ॥

भोग तथा मोक्ष का मूल कारण प्रभु है, उसे यह मूर्ख जीव भुला देता है।

जन नानक कोटन मै कोऊ भजनु राम को पावै ॥२॥३॥

करोड़ों में कोई विरला भक्त ही प्रभु के भजन को प्राप्त कर सकता है।

साधो इहु मनु गहिओ न जाई ॥

हे सन्त जनो ! यह मन पकड़ (वश) में नहीं आ सकता।

चंचल तिसना संगि बसत है या ते थिरु न रहाई ॥१॥रहाउ॥

इस (मन) के साथ चंचल तृष्णा निवास करती है इस कारण यह स्थिर नहीं रहता है।

कठन करोध घट ही के भीतरि जिह सुधि सभ बिसराई ॥

क्रोध का उग्र रूप हृदय के अन्दर ही है जिसने सम्पूर्ण ज्ञान भुला दिया है।

सुधि—सुध, याद, होश, चेत, ज्ञान प्रज्ञा।

रतनु गिआनु सभ को हिरि लीना ता सिउ कछु न बसाई ॥१॥

इस (क्रोध) ने सभी का ज्ञान रूपी रत्न हर लिया है, उसके आगे किसी का कोई बश नहीं चलता है।

जोगी जतन करत सभि हारे गुनी रहे गुन गाई ॥

(क्रोध को वश करने के हेतु) योगी सभी प्रकार के यत्न करके हार गए, गुणीजन गुण गाते रहे।

जन नानक हरि भए दइआला तउ सभ बिधि बनि आई ॥२॥४॥

यदि प्रभु दयालु हो जाए तो सभी प्रकार के साधन बन जाते हैं।

बिधि—विधि, तरीका, उपाय, साधन, रीति, युक्ति, यत्न।

साधो गोबिंद के गुन गावउ ॥

हे सन्त जनो ! प्रभु के गुण गाओ।

मानस जनमु अमोलकु पाइओ बिरथा काहि गवावउ ॥१॥रहाउ॥

अमूल्य मानव जन्म तुमको मिला है इसे व्यर्थ ही क्यों गंवाते हो ?

पतति पुनीत दीन बंध हरि सरनि ताहि तुम आवउ ॥

प्रभु पतितपावन और दीनबंधु है। उस प्रभु की शरण में तुम जाओ।

गज को त्रास मिटिओ जिह सिमरत तुम काहे बिसरावउ ॥१॥

जिसके स्मरण-मात्र से गज (हाथी) का भय दूर हो गया उस प्रभु को तुम क्यों भुलाते हो ?

तजि अभिमान मोह माइआ फुनि भजन राम चितु लावउ ॥

अभिमान, मोह और माया त्याग कर, पुनः प्रभु के भजन में मन लगाओ।

नानक कहत मुकति पंथ इहु गुरमुखि होइ तुम पावउ ॥२॥५॥

गुरु नानक देव कहते हैं कि मुक्ति का यही मार्ग है गुरुमुख (गुरु की शरण में आकर) होकर तुम इसे प्राप्त करो।

कोऊ माई भूलिओ मनु समझावै ॥

हे मां ! कोई मेरे भूले हुए मन को समझा दे।

बेद पुरान साध मग सुनि करि निमख न हरि गुन गावै ॥१॥रहाउ॥

वेद, पुराण तथा सन्तों के बताए सत्य पथ को सुनकर भी एक क्षण-मात्र के लिए मेरा मन प्रभु के गुण नहीं गाता।

दुरलभ देह पाए मानस की बिरथा जनमु सिरावै ॥

दुर्लभ मानव शरीर को पाकर भी जन्म व्यर्थ गंवा रहा है।

माइआ मोह महा संकट बन ता सिउ रुच उपजावै ॥१॥

माया, मोह अति दुखदायी हैं इनसे रुचि उत्पन्न करता है (प्रेम करता है)।

अंतरि बाहरि सदा संगि प्रभु ता सिउ नेहु न लावै ॥

भीतर-बाहर (सर्वत्र)जो प्रभु तेरा साथी है उस प्रभु से प्रीति नहीं लगाता।

नानक मुकति ताहि तुम मानहु जिह घटि रामु समावै ॥२॥६॥

जिस व्यक्ति के हृदय में प्रभु का निवास है उसे तुम मुक्त समझो।

साधो राम सरनि बिसरामा ॥

हे सन्त जनो ! प्रभु-शरण ही शान्ति का स्थिर आश्रय है।

वेद पुरान पड़े को इह गुन सिमरे हरि को नामा ।।१।।रहाउ।।

वेद-पुराणों के अध्ययन का यही लाभ है कि प्रभु के गुणों का स्मरण करे।

लोभ मोह माइआ ममता फुनि अउ बिखअन की सेवा ।।
हरख सोग परसै जिह नाहनि सो मूरति है देवा ।।१।।

लोभ, मोह, माया, ममता (अहंकार) और फिर विषय विकारों की आसक्ति तथा हर्ष शोक जिस व्यक्ति को स्पर्श नहीं करते वह वास्तव में प्रभु की मूर्ति है।

सुरग नरक अंम्रितु बिखु ए सभ तिउ कंचन अरु पैसा ।।

स्वर्ग-नरक, अमृत-विष तथा स्वर्ण-ताम्बा एक समान है।

उसतति निंदा ए सम जा कै लोभु मोहु फुनि तैसा ।।२।।

उसे (जैसे) स्तुति व निन्दा समान है वैसे ही लोभ मोह एक तुल्य हैं।

दुखु सुखु ए बाधे जिह नाहनि तिह तुम जानउ गिआनी ।।

जो सुख-दुख के बन्धन में नहीं पड़ता, वास्तव में उसे तुम ज्ञानी पुरुष समझो।

नानक मुकति तहि तुम मानउ इह बिधि को जो प्रानी ।।३।।७।।

इस प्रकार के गुणों वाला जो प्राणी है उसे तुम मुक्त जीव समझो।

मन रे कहा भइओ तै बउरा ।।

हे मन ! तू क्यों बावला हो रहा है ?

अहिनिसि अउध घटै नही जानै भइओ लोभ संगि हउरा ।।१।। रहाउ ।।

दिन-रात (सदा) आयु घटती है, इसका तुझे ज्ञान नहीं, लोभ के साथ तू हल्का (तुच्छ) हो रहा है।

जो तनु तै अपनो करि मानिओ अरु सुंदर ग्रिह नारी ।।

जिस शरीर, सुन्दर गृह तथा सुन्दर स्त्री को तूने अपना (स्वकीय) मान रखा था।

इन मैं कछु तेरो रे नाहनि देखो सोच बिचारी ।।१।।

इन पदार्थों में तेरा कुछ भी नहीं है—यह सोच-विचार कर देख लो।

रतन जनमु अपनो तै हारिओ गोबिद गति नही जानी ।।

तूने अपने रत्न के तुल्य मानव जन्म को हार दिया, क्योंकि तूने प्रभु की गति नहीं जानी।

निमख न लीन भइओ चरनन सिउ बिरथा अउध सिरानी ।।२।।

एक क्षण के लिए भी तू प्रभु-चरणों में लीन नहीं हुआ—आयु व्यर्थ ही व्यतीत कर दी (ली)।

कहु नानक सोई नरु सुखीआ रामनाम गुन गावै ।।

गुरु नानक देव कहते हैं कि वह पुरुष सुखी है जिसने प्रभु के गुणों का गायन किया है।

अउर सगल जगु माइआ मोहिआ निरभै पदु नही पावै ।।३।।८।।

सम्पूर्ण जगत माया-मोहित है। इसी कारण निर्भय पद को नहीं पाता।

नर अचेत पाप ते डरु रे ।।

हे नर ! अज्ञात (चैतन्यहीन) पाप-कर्मों से डर।

दीन दइआल सगल भै भंजन सरनि ताहि तुम परु रे ।।१।। रहाउ ।।

प्रभु दीनदयाल है, सभी भयों को दूर करनेवाला है, उसकी शरण में तुम पड़ो।

बेद पुरान जास गुन गावत ता को नामु हीऐ मो धरु रे ।।

वेद-पुराण जिसके गुण गाते हैं उस प्रभु के नाम को तुम हृदय में धारण करो (स्मरण करो)।

पावन नामु जगति मै हरि को सिमरि सिमरि कसमल सभु हरु रे ।।१।।

जगत में प्रभु का नाम पवित्र पदार्थ है। उसका निरन्तर स्मरण करके सम्पूर्ण पापों को क्षीण कर ले।

मानस देह बहुरि नह पावै कछू उपाउ मुकति का करु रे ।।

मानव जन्म फिर नहीं मिलेगा, अतः मुक्ति का कुछ उपाय कर ले।

नानक कहत गाइ करुनामै भव सागर कै पारि उतरु रे ।।२।।९।।

गुरु नानक देव कहते हैं कि करुणामय प्रभु के गुणों को गाकर भव-सागर (संसार समुद्र) से पार उतर जा।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

रागु आसा महला ९ ॥

बिरथा कहउ कउन सिउ मन की ॥

अपने मन की पीड़ा (व्यथा) किससे कहूँ ?

लोभि ग्रसिओ दसहू दिस धावत आसा लागिओ धन की ॥१॥रहाउ ॥

लोभ ग्रस्त (फंसा हुआ) दसों दिशाओं में भटकता है। इसे धन संग्रह की आशा (तृष्णा) लगी है।

सुख कै हेति बहुतु दुखु पावत सेव करत जन जन की ॥

सुख-प्राप्ति के लिए बहुत दुःख (कठिनाइयां) पाता है, हर प्राणी की सेवा करता है।

दुआरहि दुआरि सुआन जिउ डोलत नह सुध रामभजन की ॥१॥

(लोभी) कुत्ते के समान (प्राणी) द्वार-द्वार डोलता फिरता है, इसे प्रभु-भजन की सुधि नहीं।

मानस जनम अकारथ खोवत लाज न लोक हसन की ॥

मानव जन्म व्यर्थ गंवा रहा है इसे लोक-उपहास की लाज नहीं है।

नानक हरि जसु किउ नही गावत कुमति बिनासै तन की ॥२॥१॥

हे मानव ! तू प्रभु-यश क्यों नहीं गाता है ? जिससे तेरे शरीर की दुर्मति दूर हो जाए।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

रागु देवगंधारी महला ९ ॥

यह मनु नैक न कहिओ करै ॥

यह मन कुछ भी कहा हुआ नहीं करता।

सीख सिखाइ रहिओ अपनी सी दुरमति ते न टरै ॥१॥रहाउ॥

(मैं) अपनी ओर से शिक्षा देता रहता हूं पर यह अपनी दुर्मति से ही नहीं हटता।

मदि माइआ कै भइओ बावरो हरि जसु नह उचरै ॥
करि परपंचु जगत कउ डहकै अपनो उदरु भरै ॥१॥

माया के नशे में बावला (पागल) हुआ जीव प्रभु-महिमा का उच्चारण नहीं करता। (और) छल से जगत को छलता है तथा अपनी उदर-पूर्ति करता है।

परपंचु—छल, कपट, धोखा।

डहकै—वंचना करना, छलना, धोखा देना, भ्रमित करना।

सुआन पूछ जिउ होइ न सूधो कहिओ न कान धरै ॥

(मन) कुत्ते की पूंछ के समान कुटिल है, यह दी (कही) शिक्षा को ध्यान से नहीं सुनता।

कहु नानक भजु रामनाम नित जा ते काजु सरै ॥२॥१॥

गुरु नानक देव जी कहते हैं कि नित्यप्रति प्रभु-भजन कर जिससे तेरा काम (जीवन-मनोरथ) पूर्ण हो जाए।

सभि किछु जीवत को बिवहार ॥

जग में जीवित व्यक्ति के ही सारे व्यवहार हैं।

मात पिता भाई सुत बंधप अरु फुनि ग्रिह की नारि ॥१॥रहाउ॥

माता, पिता, भाई, पुत्र, बन्धु-बान्धव तथा फिर गृह की नारी (स्त्री, ये सभी जीवन के संगी हैं)।

तन ते प्रान होत जब निआरे टेरत प्रेति पुकारि ॥

जब शरीर से प्राण अलग हो जाते हैं (तो सभी सम्बन्धी इस शरीर को) प्रेत-प्रेत कहकर पुकारते हैं।

आध घरी कोऊ नह राखै घरि ते देत निकारि ॥१॥

(फिर) आधा क्षण भी (मृतक शरीर को) कोई घर में नहीं रखता (शीघ्र ही घर से) निकाल देते हैं।

म्रिग त्रिसना जिउ जग रचना यह देखहु रिदै बिचारि ॥

हे भाई ! हृदय में विचार कर देख लो कि यह संसार रचना मृगतृष्णा के समान है।

कहु नानक भजु रामनाम नित जा ते होत उधार ॥२॥२॥

गुरु नानक देवजी कहते हैं कि प्रभु के नाम का नित्य भजन (जाप) कर जिससे तुम्हारा उद्धार हो जाए।

जगत महि देखी झूठी देखी प्रीति ॥

जग में झूठी प्रीति देखी ।

अपने ही सुख सिउ सभ लागे किआ दारा किआ मीत ॥१॥रहाउ॥

चाहे स्त्री हो अथवा मित्र, सब अपने ही सुख में लीन हैं ।

मेरो मेरो सभै कहत है हित सिउ बाधिओ चीत ॥

मेरा-मेरा (मेरा सम्बन्धी है, मेरा बन्धु है) सभी कहते हैं पर सबका मन अपने-अपने हित में बंधा हुआ है ।

अंति कालि संगी नह कोऊ इह अचरज है रीति ॥१॥

अन्त समय में कोई भी साथी नहीं—यही इस संसार की आश्चर्यजनक रीति है ।

मन मूरख अजहू नह समझत सिख दै हारिओ नीत ॥

यह मूर्ख मन अभी भी नहीं समझता, (मैं) इसे शिक्षा दे-देकर हार गया ।

नानक भउजलु पारि परै जउ गावै प्रभ के गीत ॥२॥३॥

जब मानव प्रभु के गीत गाता है तो संसार-सागर से पार उतर जाता है ।

१ ओं सतगुर प्रसादि ॥

रागु बिहागड़ा महला ९ ॥

हरि की गति नहि कोऊ जानै ॥

प्रभु की गति को कोई नहीं जानता ।

जोगी जती तपी पचि हारे अरु बहु लोग सिआने ॥१॥रहाउ॥

योगी, यति, तपस्वी तथा बहुत से चतुर जन प्रयत्न करके हार गए ।

छिन महि राउ रंक कउ करई राउ रंक करि डारे ॥

(प्रभु) एक क्षण में गरीब (निर्धन) को राजा बना देता है तथा एक क्षण में राजा को निर्धन बना देता है ।

रीते भरे भरे सखनावै यह ता को बिवहारे ॥१॥

(प्रभु) रिक्त (खाली) को भर देता है, तथा भरे को रिक्त कर देता है—यह उसका (आश्चर्यजनक) व्यवहार है ।

अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखनहारा ।।

उसने अपनी माया (जाल) आप ही फैला रखी है—स्वयं ही उसका दर्शक है।

नाना रूपु धरे बहु रंगी सभ ते रहे निआरा ।।२।।

अनेक रंगों वाला वह प्रभु नाना (अनेक) रूप धारण करता है, फिर भी सबसे अलग (पृथक्) रहता है।

अगनत अपारु अलख निरंजन जिह सभ जगु भरमाइओ ।।

वह प्रभु अलक्ष्य है, अगणनीय है, अपार है, माया-रहित (निरंजन) है जिसने सारे जग को अपनी माया से भ्रमित कर रखा है।

सगल भरम तजि नानक प्राणी चरनि ताहि चितु लाइओ ।।३।।१।।

हे जीव ! सम्पूर्ण भ्रमों को त्याग कर उस प्रभु के चरणों में चित्त को लगा।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।।

सोरठि महला ९ ।।

रे मन राम सिउ करि प्रीति ।।

हे मन ! प्रभु से प्रीति (प्रेम) कर।

स्रवन गोबिन्द गुनु सुनउ अरु गाउ रसना गीति ।।१।।रहाउ।।

कानों से प्रभु के गुणों का श्रवण कर तथा रसना (जिह्वा) से प्रभु का यशोगान कर।

करि साध संगति सिमरु माधो होहि पतित पुनीत ।।

साधु की संगति कर, प्रभु (माधव) को स्मरण कर—इस प्रकार तू पतित से पवित्र हो जाएगा।

कालु बिआलु जिउ परिओ डोलै मुखु पसारे मीत ।।१।।

हे मित्र ! काल (मौत) सर्प (व्याल) की भांति मुख फैलाए भ्रमण कर रहा है।

आजु कालि फुनि तोहि ग्रसि है समझि राखहु चीति ॥

हे मानव ! इस बात का मन में विचार कर ले कि यह काल (मौत) तुझे आज अथवा कल ग्रस लेगा।

कहै नानकु रामु भजि लै जात अउसरु बीति ॥२॥१॥

गुरु नानक देव जी कहते हैं कि हे मानव ! प्रभु को भज ले, अवसर (समय) बीत रहा है।

मन की मन ही माहि रही ॥

(जीव की) मन की (आशा) मन में ही रही।

ना हरि भजे न तीरथ सेवे चोटी कालि गही ॥१॥रहाउ॥

उसने न तो प्रभु का भजन किया और न तीर्थों का सेवन किया। काल (मृत्यु, यम) ने चोटी (केश) आकर पकड़ ली।

दारा मीत पूत रथ, संपति धन पूरन सभ मही ॥

स्त्री, मित्र, पुत्र, रथ, संपत्ति, धन तथा सम्पूर्ण पृथ्वी (नश्वर है)।

अवर सगल मिथिआ ए जानउ भजनु रामु को सही ॥१॥

ये तथा अन्य सभी पदार्थ नश्वर हैं। प्रभु का भजन ही एकमात्र सत् (स्थायी) वस्तु है।

फिरत फिरत बहुते जुग हारिओ मानस देह लही ॥

योनियों में भ्रमण करते हुए तूने बहुत से जन्म व्यतीत कर दिए। अब तुझे यह मानव शरीर प्राप्त हुआ है।

नानक कहत मिलन की बरीआ सिमरत कहा नही ॥२॥२॥

गुरु नानक देव कहते हैं कि (मानव जन्म ही) तेरा प्रभु-मिलन का समय है। अतः प्रभु का स्मरण क्यों नहीं करता !

मन रे कउनु कुमति तै लीनी ॥

हे मन ! तूने यह कौन सी कुमति ले ली है ?

पर दारा निंदिआ रस रचिओ राम भगति नही कीनी ॥१॥रहाउ॥

पर-स्त्री तथा पर-निन्दा के रसास्वादन में तू डूबा है। प्रभु की भक्ति नहीं की।

मुकति पंथु जानिओ तै नाहनि धन जोरन कउ धाइआ ।।

मुक्ति (मोक्ष) का मार्ग तूने नहीं जाना—धन संग्रह करने के लिए दौड़ता रहा ।

अंति संग काहू नही दीना बिरथा आपु बंधाइआ ।।१।।

अन्त समय पर कोई भी तेरा साथ नहीं देगा, व्यर्थ ही स्वयं को बन्धनों में बांध रहा है ।

ना हरि भजिओ न गुर जनु सेविओ नह उपजिओ कछु गिआना ।।

तूने न प्रभु का भजन किया, न गुरुजनों की सेवा की, न ही कुछ (आध्या-त्मिक) ज्ञान (तुझ में) उपजा ।

घटि ही माहि निरंजनु तेरै तै खोजत उदिआना ।।२।।

तेरे हृदय में ही माया रहित प्रभु का वास है पर तू उसे जंगलों में खोज रहा है ।

बहुतु जनम भरमत तै हारिओ असथिर मति नही पाई ।।

तूने कई जन्म भटकते हुए गंवा दिए, परन्तु स्थिर मति प्राप्त नहीं की (आत्म विषैणी बुद्धि नहीं पाई) ।

मानस देह पाइ पद हरि भजु नानक बात बताई ।।३।।३।।

गुरु नानक देव ने यह बात समझा कर बताई है कि तूने अमूल्य मानव-शरीर पाया है अतः प्रभु का भजन कर ।

मन रे प्रभ की सरनि बिचारो ।।

हे मन ! प्रभु की शरण (प्रभु के नाम) का विचार करो (स्मरण कर) ।

जिह सिमरत गनका सी उधरी ता को जसु उरधारो ।।१।।रहाउ।।

जिस प्रभु का स्मरण करते गणिका (गनका) जैसी का उद्धार हो गया उस प्रभु के यश को हृदय में धारण करो ।

अटल भइओ ध्रूअ जा कै सिमरनि अरु निरभै पदु पाइआ ।।

जिस प्रभु के स्मरण से ध्रुव ने स्थिर (अटल) तथा निर्भय पद को प्राप्त किया ।

दुख हरता इह बिधि को सुआमी तै काहे बिसराइआ ॥१॥

जब ही सरनि गही किरपा निधि गज ग्राह ते छूटा ॥

दुखों को दूर करने वाले प्रभु को तूने क्यों भुला दिया है ? जब कृपा-निधि प्रभु की शरण गज (हाथी) ने ली तो वह ग्राह से छूट गया।

महमा नाम कहा लउ बरनउ राम कहत बंधन तिह तूटा ॥२॥

मैं नाम की महिमा कहां तक वर्णन करूं ? जिसने प्रभु का नाम लिया (जपा) वह बन्धनों से मुक्त हो गया।

अजामलु पापी जगु जाने निमख माहि निसतारा ॥

अजामिल पापी को जग जानता है (उसकी नाम-स्मरण से) एक क्षण में मुक्ति हो गयी।

नानक कहत चेत चिंतामनि तै भी उतरहि पारा ॥३॥४॥

गुरु नानक देवजी कहते हैं कि हे भाई ! इसलिए तू भी चिन्तामणि (मन वांछित फल को देनेवाले) प्रभु का स्मरण कर, तू भी भव-सागर से पार उतर जाएगा।

प्रानी कउनु उपाउ करै।

हे गुरु ! जीव कौन सा उपाय करे।

जा ते भगति राम की पावै जम को त्रासु हरै ॥१॥रहाउ॥

जिसके द्वारा प्रभु की भक्ति प्राप्त कर ले तथा यम के भय को दूर कर ले।

कउनु करम बिदिआ कहु कैसी धरमु कउनु फुनि करई ॥

कौन-सा कर्म (कार्य) कैसी विद्या और पुनः कौन-सा धर्म करे ? (जिससे मुक्ति प्राप्त हो)।

कउनु नामु गुर जा कै सिमरै भव सागर कउ तरई ॥१॥

हे गुरुजी ! वह कौन-सा नाम है ? जिस नाम के स्मरण से संसार-सागर से पार उतर जाएं।

कल मै एकु नामु किरपा निधि जाहि जपै गति पावै ॥

कलियुग में कृपानिधि प्रभु का नाम ही एक मात्र उत्तम साधन है जिसका जाप करके मनुष्य परमगति को पा लेता है।

अउर धरम ता कै समि नाहिन इह बिधि बेदु बतावै ॥२॥

अन्य कोई धर्म उस प्रभु नाम के तुल्य नहीं—ऐसा वेद भी बतलाते हैं।

सुखु दुखु रहति सदा निरलेपी जा कउ कहत गुसाई ॥

जिसे पृथ्वी का स्वामी प्रभु कहते हैं वह सुख-दुख से (बन्धनों से) सदा निर्लिप्त रहता है।

सो तुम ही महि बसै निरंतरि नानक दरपनि निआई ॥३॥५॥

वह प्रभु सदा तुम्हारे आत्मा में ही निवास करता है जैसे दर्पण में प्रतिच्छाया।

माई मै किहि बिधि लखउ गुसाई ॥

हे मां ! मैं किस प्रकार प्रभु को देखूं ?

महा मोह अगिआनि तिमरि मो मनु रहिओ उरझाई ॥१॥ रहाउ ॥

अति मोह से उपजे अज्ञान रूपी अन्धकार के कारण मेरा मन संसार में फंसा हुआ है।

सगल जनम भरम ही भरम खोइओ नह असथिरु मति पाई ॥

सारा जीवन (जन्म) मैंने माया की भटकन में ही खो दिया, अभी तक मैंने स्थिर मति नहीं पाई।

बिखिआ सकत रहिओ निस बासुर नह छूटी अधमाई ॥१॥

दिन-रात विषय-विकारों में आसक्त रहा, मेरी नीचता नहीं छूटी।

साध संगु कबहू नही कीना नह कीरति प्रभ गाई ॥

न तो कभी सत्संग किया तथा न ही कभी प्रभु-यश का गायन किया।

जन नानक मै नाहि कोऊ गुनु राखि लेहु सरनाई ॥२॥६॥

गुरु नानक देवजी कहते हैं कि हे प्रभु ! मुझ दास में कोई गुण नहीं। आप की शरण में आया हूँ मेरी रक्षा करो।

माई मनु मेरो बसि नाहि ॥

हे मां ! मेरा मन मेरे वश में नहीं है।

निस बासुर बिखिअन कउ धावत किहि बिधि रोकउ ताहि ॥१॥ रहाउ ॥

दिन-रात विषयों की ओर दौड़ता है। उसे किस प्रकार रोकूं ?

बेद पुरान सिम्रिति के मत सुनि निमख न हीए बसावै ।।

वेद, पुराण तथा स्मृतियों के उपदेशों (मतों) को सुनकर एक क्षण के लिए भी (प्रभु नाम) को मन में नहीं बसाता।

पर धन पर दारा सिउ रचिओ बिरथा जनमु सिरावै ।।१।।

पराये धन तथा पराई स्त्री में अनुरक्त अपने मानव-जन्म को व्यर्थ ही बिता रहा है।

मदि माइआ कै भइओ बावरो सूझत नह कछु गिआना ।।

माया के नशे में बावला हो गया है, अतः कुछ आध्यात्मिक ज्ञान नहीं सूझता।

घट ही भीतरि बसत निरंजनु ता को मरमु न जाना ।।२।।

मानव-हृदय में ही माया रहित (निरंजन) प्रभु का निवास है पर उसके रहस्य को मानव नहीं जान पाता है।

जब ही सरनि साध की आइओ दुरमति सगल बिनासी ।।

जब (कोई मानव निश्चयपूर्वक) साधु की शरण में आ जाता है तो उसकी सारी कुबुद्धि दूर हो जाती है।

तब नानक चेतिओ चिंतामनि काटी जम की फासी ।।३।।७।।

तब (यह मन) चिन्तामणि प्रभु का स्मरण करता है तथा स्मरण से ही यम का फन्दा काट लेता है।

चिंतामनि—सभी कामनाओं को पूर्ण करने में समर्थ, परमेश्वर।

रे नर इह साची जीअ धारि ।।

हे जीव ! यह सत्य बात (निश्चयपूर्वक) मन में धारण कर लो।

सगल जगतु है जैसे सुपना बिनसत लगत न बार ।।१।।रहाउ।।

सारा जगत स्वप्नवत है, इसे नष्ट होते देर नहीं लगती।

बारू भीति बनाई रचि पचि रहित नही दिन चारि ।।
तैसे ही इह सुख माइआ के उरझिओ कहा गवार ।।१।।

जैसे बालू (रेत) की दीवार बनाई, उसे लेप कर स्वच्छ किया पर वह चार दिन भी स्थिर नहीं रहती।

वैसे ही यह माया-जन्य सुख भी अस्थिर हैं। हे मूर्ख जीव ! तू इनमें क्यों उलझ रहा है ?

अजहू समझि कछु बिगरिओ नाहिनि भजि ले नामु मुरारी ॥

अब भी समझ ले, कुछ नहीं बिगड़ा और प्रभु के नाम को जप ले।

कहु नानक निज मतु साधन कउ भाखिओ तोहि पुकारि ॥१॥८॥

गुरु नानक देव कहते हैं कि मैंने अपना मत तथा उसके साधन को पुकार-पुकार कह दिया।

इह जगि मीतु न देखिओ कोई ॥

इस संसार में कोई मित्र नहीं देखा।

सगल जगतु अपनै सुखि लागिओ दुख मै संगि न होई ॥१॥रहाउ॥

सम्पूर्ण विश्व अपने सुख में लीन है। दुःख में कोई किसी का साथी नहीं होता।

दारा मीत पूत सनबंधी सगरे धन सिउ लागे ॥

स्त्री, मित्र, पुत्र, सम्बन्धी (भाई बन्धु) सभी धन से स्नेह करते हैं।

जब ही निरधन देखिओ नर कउ संगु छाडि सभ भागे ॥१॥

जैसे ही मानव निर्धन हुआ पाया सारे सम्बन्धी उसका साथ छोड़कर भाग जाते हैं।

कहंउ कहा यिआ मन बउरे कउ इन सिउ नेहु लगाइओ ॥

मैं (अपने) इस पागल मन को कैसे समझाऊं ? इसने इनसे प्रेम किया है।

दीनानाथ सकल भै भंजन जसु ता को बिसराइओ ॥२॥

दीनों के बन्धु, सम्पूर्ण भय को दूर करनेवाले प्रभु को भुला दिया।

सुआन पूछ जिउ भइओ न सूधउ बहुतु जतनु मै कीनउ ॥

जैसे कुत्ते की पूंछ सीधी नहीं होती, मैंने बहुत प्रयत्न किए (पर यह मन प्रभु-भजन में लीन नहीं होता है)।

नानक लाज बिरद की राखहु नामु तुहारउ लीनउ ॥३॥९॥

हे प्रभु ! आप अपने यश की लाज रखो क्योंकि मैंने आपके नाम का आश्रय लिया है।

मन रे गहिओ न गुरु उपदेसु ॥

हे मन ! तूने गुरु का उपदेश ग्रहण नहीं किया ।

कहा भइओ जउ मूडु मुडाइओ भगवउ कीनो भेसु ॥ १ ॥ रहाउ ॥

सिर मुण्डाने से अथवा भगवा भेष धारण करने से क्या होता है ?

साच छाडि कै झूठह लागिउ जनमु अकारथु खोइओ ॥

सत् (स्थिर) वस्तुओं का त्याग करके झूठ (अस्थिर, नाशवान् वस्तुओं) में लगा रहा । अमूल्य मानव जन्म को व्यर्थ ही गवां दिया ।

करि परपंच उदर निज पोखिओ पसु की निआई सोइओ ॥ १ ॥

छल-कपट करके अपनी उदरपूर्ति की तथा पशु की भांति सोता रहा ।

राम भजन की गति नही जानी माइआ हाथि बिकाना ॥

प्रभु भजन की युक्ति (गति) नहीं जानी, माया के हाथ बिक गया ।

उरझि रहिओ बिखिअन संगि बउरा नामु रतनु बिसराना ॥ २ ॥

यह पागल मन विषय-विकारों में आसक्त रहा—इसने प्रभु के नाम रूप रत्न को भुलाए रखा ।

रहिओ अचेत न चेतिओ गोबिन्द बिरथा अउध सिरानी ॥

(यह मन) अचेत (माया भ्रमित) ही रहा, प्रभु का चिन्तन (स्मरण) नहीं किया व्यर्थ ही आयु व्यतीत कर दी ।

कहु नानक हरि बिरदु पछानउ भूले सदा परानी ॥ ३ ॥ १० ॥

गुरु नानक देव कहते है—हे प्रभु ! अपने यश को सदा याद रखिए, जीव तो सदा भूलनेवाला है ।

जो नरु दुख मै दुखु नही मानै ॥

जो प्राणी दुःख में दुःख नहीं मानता ।

सुख सनेहु अरु भै नही जा कै कंचन माटी मानै ॥ १ ॥ रहाउ ॥

जिसे सुख से लगाव नहीं किसी से कोई भय नहीं, स्वर्ण को मिट्टी के तुल्य मानता है ।

नह निंदिआ नह उसतति जा कै लोभु मोहु अभिमाना ॥

(जो) न किसी की निन्दा करता है तथा न किसी की स्तुति करता है। जिसके मन में लोभ, मोह तथा अभिमान नहीं हैं ।

हरख सोग ते रहै निआरउ नाहि मान अपमाना ॥ १ ॥

हर्ष शोक से निर्लिप्त रहता है, मान अपमान (उसे) प्रभावित नहीं करते।

आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहै निरासा ॥

सभी आशाओं तथा मनोकामनाओं का त्याग करके जो संसार से निर्लिप्त रहता है।

कामु क्रोधु जिह परसै नाहनि तिह घटि ब्रहमु निवासा ॥ २ ॥

काम क्रोध जिसे स्पर्श नहीं करते, उस प्राणी के हृदय में ब्रह्म का निवास होता है (वह हृदय ब्रह्म का निवास स्थान है)।

गुर किरपा जिह नर कउ कीनी तिह इह जुगति पछानी ॥

जिस प्राणी पर गुरु ने यह कृपा की, उसने इस युक्ति (ब्रह्म-साक्षात्कार के उपाय) को जान लिया।

नानक लीन भइओ गोबिन्द सिउ जिउ पानी संगि पानी ॥ ३ ॥ ११ ॥

वह प्राणी प्रभु में उसी प्रकार लीन हो जाता है जैसे जल के साथ जल मिल जाता है।

प्रीतम जानि लेहु मन माही ॥

हे सज्जन ! अपने मन में ही प्रभु को जान लो।

अपने सुख सिउ ही जगु फांधियो को काहू को नाही ॥ १ ॥ रहाउ ॥

सम्पूर्ण संसार अपने स्वार्थ में ही बंधा हुआ है, कोई किसी का (सहायक) नहीं।

सुख मै आनि बहुतु मिलि बैठत रहत चहू दिसि घेरै ॥

सुख में बहुत से (मित्र) आकर मिलकर बैठते हैं तथा चारों ओर से घेरे रहते हैं।

बिपति परी सभ ही संगु छाडित कोऊ न आवत नेरै ॥ १ ॥

आपत्ति आने पर सभी साथ छोड़ जाते हैं, कोई भी निकट नहीं आता है।

घर की नारि बहुतु हितु जा सिउ सदा रहत संग लागी ॥

घर की स्त्री (पत्नी) जिससे बहुत स्नेह था तथा जो सदैव पति के साथ रहती थी।

जब ही हंस तजो इह कांइआ प्रेत प्रेत करि भागी ॥ २ ॥

जैसे ही आत्मा (हंस) शरीर को त्याग देता है वैसे ही वह मृत शरीर को प्रेत प्रेत कहकर भाग जाती है।

इह बिधि को बिउहारु बनिओ है जा सिउ नेहु लगाइओ ।।

इस प्रकार का (संसार का) यह व्यवहार बना हुआ है जिससे तूने प्रेम किया है।

अंत बार नानक बिनु हरि जी कोऊ कामि न आइओ ॥३॥१२ ॥

अन्तिम समय पर बिना प्रभु के कोई काम नहीं आता है (साथ नहीं देता है)।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

धनासरी महला ६॥

काहे रे बन खोजन जाई ॥

हे जीव ! (उस प्रभु को) जंगलों में खोजने क्यों जाता है ?

सरब निवासी सदा अलेपा तोही संगि समाई ॥१॥रहाउ॥

(वह) सर्वत्र निवास करता है (सर्वव्यापक है), सदा निर्लेप है, पुनः तुझमें ही समाया हुआ है ।

पुहप मधि जिउ बासु बसतु है मुकर माहि जैसे छाई ॥

जैसे पुष्प के मध्य सुगन्धि तथा दर्पण में परछाईं का बास होता है,

तैसे ही हरि बसे निरंतरि घट ही खोजहु भाई ॥१॥

हे भाई ! वैसे ही प्रभु सदा तुझमें निवास करता है उसे हृदय में ही खोजो।

बाहरि भीतरि एको जानहु इहु गुर गिआनु बताई ॥

अन्दर-बाहर एक ही प्रभु को सर्वव्यापी समझो। यह ज्ञान गुरु ने बताया है।

जन नानक बिनु आपा चीनै मिटै न भ्रम की काई ॥२॥१॥

गुरु नानक देव जी कहते हैं कि आत्म-चिन्तन के बिना भ्रम की काई दूर नहीं होती है।

साधो इहु जगु भरम भुलाना ।।

हे साधुओ ! यह जग (माया के) भ्रमवश भटका हुआ है ।

रामनाम का सिमरनु छोडिआ माइआ हाथि बिकाना ।।१।।रहाउ।।

प्रभु के नाम का स्मरण (जाप) त्यागकर माया के हाथ बिका हुआ है ।

मात पिता भाई सुत बनिता ता कै रसि लपटाना ।।

माता, पिता, भाई, पुत्र तथा स्त्री इनके प्रेम-रस में तू फंसा हुआ है ।

जोबनु धनु प्रभता कै मद मै अहिनिसि रहै दिवाना ।।१।।

यौवन, धन, प्रभुत्व के नशे में दिन रात (सदा) दिवाना हो रहा है ।

दीन दइआल सदा दुख भंजन ता सिउ मनु न लगाना ।।

दीन-दयाल, सदा दुःख हर्ता प्रभु के भजन में तू मन नहीं लगाता है ।

जन नानक कोटन मै किनहू गुरमुखि होइ पछाना ।।२।।२।।

करोड़ों में किसी बिरले गुरुमुख ने ही प्रभु को पहिचाना है (अथवा अपने वास्तविक स्वरूप को जाना है)।

तिह जोगी कउ जुगति न जानउ ।।

उस योगी को प्रभु से जुड़ा हुआ (प्रभु में लीन) न समझो ।

लोभ मोह माइआ ममता फुनि जिह घटि माहि पछानउ ।।१।।रहाउ।।

जिसके हृदय में लोभ, मोह, माया की ममता आदि विकार समाए हुए हैं ।

पर निन्दा उसतति नह जा कै कंचन लोह समानो ।।

जिसके मन में परनिन्दा व पराई स्तुति नहीं है। (जो) स्वर्ण को लोहवत् समझता है ।

हरख सोग ते रहै अतीता जोगी ताहि बखानो ।।१।।

हर्ष-शोक से निर्लिप्त रहता है उस पुरुष के लिए "योगी" पद का उच्चारण करो ।

चंचल मनु दह दिसि कउ धावत अचल जाहि ठहरानो ।।

चंचल (चपल) मन दसों दिशाओं में भ्रमण करता है परन्तु जिसने इस अस्थिर मन को अचल प्रभु के नाम-स्मरण में स्थिर कर लिया है ।

कहु नानक इह बिधि को जो नरु मुकति ताहि तुम मानो ॥२॥३॥

गुरु नानक देव जी कहते हैं कि इस प्रकार के गुणों वाले व्यक्ति को तुम मुक्त समझो।

अब मै कउनु उपाउ करउ ॥

अब मैं कौन-सा उपाय करूँ ?

जिह बिधि मन को संसा चूकै भउनिधि पारि परउ ॥१॥ रहाउ ॥

जिस विधि से मन की शंका दूर हो जाए तथा संसार सागर से पार हो जाऊँ।

जनमु पाइ कछु भलो न कीनो ता ते अधक डरउ ॥

मानव जन्म पाकर भी कुछ शुभ कार्य नहीं किए इस कारण अधिक भयभीत हूँ।

मन बच क्रम हरि गुन नही गाए यह जीअ सोच धरउ ॥१॥

मन-वचन-कर्म से प्रभु का गुण-गान नहीं किया, यह हृदय में चिन्ता लगी है।

गुरमति सुनि कछु गिआनु न उपजिओ पसु जिउ उदरु भरउ ॥

गुरु की शिक्षा (उपदेश) सुन कर भी (मन में) कुछ ज्ञान उत्पन्न नहीं हुआ, मैं पशुवत् उदरपूर्ति करता हूँ।

कहु नानक प्रभ बिरदु पछानउ तब हउ पतत तरउ ॥२॥४॥

गुरु नानक देव कहते हैं कि हे प्रभु ! आप अपने यश की रक्षा करो—तभी मैं पापी भी भवसागर से तर सकता हूँ।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

जैतसरी महला ९ ॥

भूलिओ मनु माइआ उरझाइओ ॥

(हे भाई !) भूला हुआ मन माया में उलझ गया (जिस कारण प्रभु को भुला दिया)।

जो जो करम कीओ लालच लगि तिह तिह आपु बंधाइओ ॥१॥रहाउ॥

लालच में लग (लीन) कर जो-जो काम किए, उन कार्यों से स्वयं को बन्धनों में बांध लिया।

समझ न परी बिखै रस रचिओ जसु हरि को बिसराइओ ॥

(परम तत्त्व की) समझ (ज्ञान) नहीं आई। विषय-वासनाओं के रस में लीन रहा, प्रभु यश को भुला दिया।

संगि सुआमी सो जानिओ नाहिन बनु खोजन कउ धाइओ ॥१॥

जो प्रभु सदा तेरे साथ निवास करता है उस प्रभु को तूने जाना नहीं, उसे खोजने के लिए वन में दौड़ता-भागता फिर रहा है।

रतनु रामु घट ही के भीतरि ता को गिआनु न पाइओ ॥

रत्न-स्वरूप प्रभु तेरे हृदय के अन्दर है, उसका ज्ञान तूने नहीं पाया।

जन नानक भगवन्त भजन बिनु बिरथा जनमु गवाइओ ॥२॥१॥

गुरु नानक देव कहते हैं कि हे नर! तूने प्रभु-भजन के बिना अपना मानव-जन्म व्यर्थ ही गवां दिया है।

हरि जू राखि लेहु पति मेरी ॥

हे प्रभु! मेरी लाज रख लो।

जम को त्रास भइओ उर अंतरि सरनि गही किरपा निधि तेरी ॥१॥रहाउ॥

यम का भय मेरे हृदय में उत्पन्न हुआ। हे कृपानिधि प्रभु! तेरी शरण ली है।

महा पतित मुगध लोभी फुनि करत पाप अब हारा ॥

महापापी हूँ, मूर्ख हूँ, लोभी हूँ, पुनः-पुनः पाप करता करता अब थक गया हूँ।

भै मरबे को बिसरत नाहन तिह चिन्ता तनु जारा ॥१॥

मृत्यु का भय भूलता नहीं है, इसी चिन्ता में शरीर को जला दिया।

कीए उपाव मुकति के कारनि दहदिसि कउ उठि धाइआ ॥

(मृत्यु के भय से) मुक्ति (प्राप्ति के) अनेक उपाय किए, दसों दिशाओं में भागता रहा।

घट ही भीतरि बसै निरंजनु ता को मरमु न पाइआ ॥२॥

हृदय में ही प्रभु का निवास है इस ज्ञान को मैंने नहीं पाया।

नाहिन गुनु नाहिन कछु जपु तपु कउनु करमु अब कीजै ॥

न मुझ में कुछ गुण हैं, न ही मैं ने जप-तप किए हैं, अब कौन-सा (मुक्ति का) उपाय करूँ?

नानक हारि परिओ सरनागति अभै दानु प्रभ दीजै ॥३॥२॥

हार कर मैं आपकी शरण में आया हूँ। हे प्रभु ! मुझे अब अभयदान दो।

मन रे साचा गहो बिचारा ॥

हे मन ! यह अपने हृदय में सत् विचार ग्रहण करो।

रामनाम बिनु मिथिआ मानो सगरो इहु संसारा ॥१॥रहाउ॥

एक प्रभु-नाम के अतिरिक्त यह सम्पूर्ण जगत् नश्वर है, ऐसा मानो।

जा कउ जोगी खोजत हारे पाइओ नाहि तिह पारा ॥

जिस प्रभु को योगी खोजते-खोजते हार गए और उसका पार (अन्त) नहीं पा सके,

सो सुआमी तुम निकटि पछानो रूप रेख ते निआरा ॥१॥

उस प्रभु को तुम अपने निकट समझो, वह रूप रेखा से रहित है।

पावन नाम जगत मै हरि को कबहू नाहि संभारा ॥

जगत में एक मात्र प्रभु-नाम पवित्र पदार्थ है (लेकिन) उस (नाम) को मैंने कभी स्मरण नहीं किया।

नानक सरनि परिओ जग बंदन राखहु बिरदु तुहारा ॥२॥३॥

हे जग के वंदनीय प्रभु ! मैं आपकी शरण में पड़ा हूँ। अपना विरद (यश) रख लो।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

टोडी महला ९ ॥

कहउ कहा अपनी अधमाई ॥

मैं अपनी नीचता का कहाँ तक वर्णन करूँ ?

उरझिओ कनक कामनी के रस नह कीरति प्रभ गाई ॥१॥रहाउ॥

स्वर्ण तथा स्त्री के रसास्वादन में मेरा मन उलझा रहा, प्रभु की कीर्ति का कभी गायन नहीं किया।

जग झूठै कउ साचु जानि कै ता सिउ रुच उपजाई ॥

नश्वर संसार को सत्य (स्थिर) मान कर इस (संसार) से ही प्रेम किया है।

दीन बंध सिमरिओ नही कबहू होत जु संगि सहाई ॥१॥

दीनों के सखा प्रभु का कभी स्मरण नहीं किया जो सदा साथी और सहायक होता है।

मगन रहिओ माइआ मै निसदिनि छुटी न मन की काई ॥

सदा (दिन रात) माया के रसास्वादन में ही मगन रहा मन की मलिनता कभी नहीं छूटी।

कहि नानक अब नाहि अनत गति बिनु हरि की सरनाई ॥२॥१॥

गुरु नानक देव कहते हैं कि हे प्रभु ! आप की शरण के अतिरिक्त अब अन्य कोई गति (साधन, उपाय) नहीं। अतः मैं आपकी शरण में आ गया हूँ।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

तिलंग महला ९ काफी ॥

चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी ॥

हे प्राणी ! यदि प्रभु का स्मरण करना है तो दिन-रात उसका चिन्तन कर।

छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी ॥१॥रहाउ॥

क्षण प्रति क्षण आयु व्यतीत हो रही है जैसे फूटे घड़े से शनैः-शनैः पानी बहता रहता है।

हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना ॥

हे मूर्ख अज्ञानी ! प्रभु के गुण क्यों नहीं गाता ?

झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना ॥१॥

मिथ्या लोभ में लीन हो कर तूने मृत्यु (मौत) को नहीं जाना।

अजहू कछु बिगरिओ नही जो प्रभ गुन गावै ।।

अभी कुछ नहीं बिगड़ा, यदि अब भी प्रभु के गुण गा ले ।

कहु नानक तिह भजन ते निरभै पदु पावै ।।२।।१।।

गुरु नानक देव जी कहते हैं कि उस प्रभु-स्मरण द्वारा निर्भय पद को प्राप्त कर लेगा ।

जागि लेहु रे मना जाग लेहु।। कहा गाफल सोइआ ।।

हे अचेत मन ! जाग जा, चेतन हो जा, क्यों असावधान होकर सो रहा है ?

जो तन उपजिआ संग ही सो भी संग न होइआ ।।१।।रहाउ।।

जो शरीर तेरे साथ ही उत्पन्न हुआ था वह भी अन्त समय तेरा साथी नहीं होगा ।

मात पिता सुत बंध जन हितु जा सिउ कीना ।।

माता, पिता, पुत्र, बन्धु-बान्धव तथा सम्बन्धी जन जिनसे तुझे मोह था,

जीउ छुटिओ जब देह ते डारि अगनि मै दीना ।।१।।

जैसे ही शरीर से आत्मा अलग हो गया, (ये सम्बन्धी मृत) शरीर को अग्नि में डाल देंगे ।

जीवत लउ बिउहारु है जग कउ तुम जानउ ।।

इस संसार का सब व्यवहार जीवित प्राणी के साथ ही है—ऐसा तुम जान लो ।

नानक हरि गुन गाइ लै सभ सुफन समानउ ।।२।।२।।

प्रभु के गुण गा ले (भक्ति कर ले), ये सब (सांसारिक वस्तुएं) स्वप्नवत् हैं ।

हरि जसु रे मना गाइ लै जो संगी है तेरो ।।

हे मन ! प्रभु की कीर्ति (यश) का गायन कर, जो तेरा सदा साथी है ।

अउसरु बीतिओ जातु है कहिओ मान लै मेरो ।।१।।रहाउ।।

अवसर बीत रहा है, मेरा कहना मान ले ।

संपति रथ धन राज सिउ अति नेहु लगाइओ ।।
काल फास जब गलि परी सभ भइओ पराइओ ॥१॥

सम्पत्ति, रथ, धन, राज्यसत्ता आदि जिनसे तूने अधिक स्नेह (प्रेम) कियाथा। काल (यम) का फन्दा जब तेरे गले में आ पड़ा तो ये सभी वस्तुएं परायी हो गई।

जानि बूझ कै बावरे तै काजु बिगारिओ ।।

हे बावले मन ! तूने सोच-विचार कर (ज्ञानवान् होकर) अपना (मानव जन्म रूप) कार्य बिगाड़ दिया।

पाप करत सुकचिओ नही नह गरबु निवारिओ ।।२।।

पाप करते समय संकोच नहीं किया तथा न ही मन से अहंकार को दूर किया।

जिह बिधि गुर उपदेसिआ सो सुनु रे भाई ।।

हे भाई ! जो गुरु ने उपदेश दिया—उसे (सावधान होकर) सुन !

नानक कहत पुकारि कै गहु प्रभ सरनाई ।।३।।३।।

गुरु नानक देव पुकार कर कहते हैं कि प्रभु की शरण ग्रहण करो।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।।

रागु बिलावलु महला ९ ॥

दुख हरता हरिनामु पछानो ।।

सभी दुःखों को दूर करने वाला प्रभु का नाम है, ऐसा तुम जान लो।

अजामलु गनिका जिह सिमरत मुकत भए जीअ जानो ।।१।।रहाउ।।

अजामिल, गणिका जिस प्रभु के स्मरणमात्र से मुक्त हो गये (उस नाम की महत्ता को) हृदय में धारण करो (जानो)।

गज की त्रास मिटी छिनहू महि जबही रामु बखानो ।।

गज (हाथी) का भय एक क्षण में ही दूर हो गया जैसे ही उसने प्रभु-नाम का उच्चारण किया।

नारद कहत सुनत ध्रूआ बारिक भजन माहि लपटानो ॥१॥

नारद (मुनि) के कथन को सुनकर बालक ध्रुव प्रभु-भजन में लीन हो गया।

अचल अमर निरभै पदु पाइओ जगत जाहि हैरानो ॥

(नाम जाप कर) ध्रुव ने स्थिर, अमर तथा निर्भय पद को प्राप्त किया (उसकी बाल्यावस्था तथा उच्च पद प्राप्ति को देखकर) संसार आश्चर्यचकित रह गया।

नानक कहत भगत रछक हरि निकटि ताहि तुम मानो ॥२॥१॥

प्रभु भक्त-रक्षक है, उसे तुम अपने समीप ही अनुभव करो।

हरि के नाम बिना दुखु पावै ॥

(जीव) प्रभु के नाम (स्मरण) के बिना दुख पाता है।

भगति बिना सहसा नह चूकै गुरु इहु भेदु बतावै ॥१॥रहाउ॥

प्रभु-भक्ति के बिना संशय नहीं दूर होता। गुरु ने यह भेद बता दिया।

कहा भइओ तीरथ ब्रत कीए राम सरनि नही आवै ॥

तीर्थ-स्नान व व्रत-उपवास से क्या लाभ ? (सभी का फल तुच्छ है, जब तक जीव) प्रभु की शरण में नहीं आया,

जोगु जग निहफल तिह मानो जो प्रभ जसु बिसरावै ॥१॥

योग, यज्ञ आदि सभी कर्मों को व्यर्थ समझो, जिन्होंने प्रभु के यश को भुला दिया है।

मान मोह दोनो कउ परहरि गोबिन्द के गुन गावै ॥

मान तथा मोह दोनों को त्याग कर प्रभु के गुन गाओ।

कहु नानक इह बिधि को प्रानी जीवन मुकति कहावै ॥२॥२॥

इस प्रकार के गुणों वाला प्राणी जीवन्मुक्त कहलाता है।

जा महि भजनु राम को नाही ॥

जिस (प्राणी) के हृदय में प्रभु-भजन की रुचि नहीं,

तिह नरि जनमु अकारथु खोइआ यह राखहु मन माही ॥१॥रहाउ॥

उस प्राणी ने अपना जीवन व्यर्थ ही खो दिया, यह बात मन में सदा याद रखो।

तीरथ करै बरत फुनि राखै नह मनूआ बसि जा को ।।

तीर्थों पर स्नान करें पुनः व्रत रखे—फिर भी यदि मन (उसके) अपने वश में नहीं है,

निहफल धरमु ताहि तुम मानहु साचु कहत मै या कउ ।।१।।

उसके धर्म-कर्म को निष्फल समझो—यह मैं विश्वास के साथ सत्य कहता हूँ।

जैसे पाहनु जल महि राखिओ भेदै नाहि तिह पानी ।।

जैसे पत्थर जल के मध्य रख दिया—उसे जल भेदता नहीं (जल उसमें प्रवेश नहीं करता)।

तैसे ही तुम ताहि पछानहु भगति हीन जो प्रानी ।।२।।

वैसे ही तुम भक्तिहीन प्राणी को समझो।

कलि महि मुकति नाम ते पावत गुरु यह भेदु बतावै ।।

कलियुग में प्रभु के नाम-स्मरण से मुक्ति प्राप्त होती है। यह गुरु ने भेद (सार) बताया है।

कहु नानक सोई नरु गरूआ जो प्रभ के गुन गावै ।।३।।३।।

वही प्राणी पूज्यनीय है जो प्रभु के गुण गाता है।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।।

रागु रामकली महला ९ ।।

रे मन ओट लेहु हरिनामा ।।

हे मन ! प्रभु के नाम का आश्रय लो।

जा कै सिमरनि दुरमति नासै पावहि पदु निरबाना ।।१।।रहाउ।।

जिसके स्मरण करने से दुर्मति नष्ट होती (दूर होती) है तथा निर्वाण-पद की प्राप्ति होती है।

बडभागी तिह जन कउ जानहु जो हरि के गुन गावै ॥

उस प्राणी को भाग्यशाली समझो जो प्रभु के गुण गाता है ।

जनम जनम के पाप खोइ कै फुनि बैकुंठि सिधावै ॥१॥

जन्म-जन्मान्तर के पापों को निःशेष करके वैकुण्ठ को जाता है ।

अजामल कउ अंति काल महि नाराइण सुधि आई ॥

अजामिल (पापी) को अन्तिम समय प्रभु की याद आई ।

जा गति कउ जोगीसुर बाछत सो गति छिन महि पाई ॥२॥

जिस परम गति को योगी (कठिन साधना) से पाना चाहते हैं वह गति (अजामिल) ने एक क्षण में पा ली ।

नाहिन गुनु नाहिन कछु बिदिआ धरमु कउनु गजि कीना ॥

गज (हाथी) में न कोई गुण था, न कोई विद्या थी और उसने कौन सा धर्म किया था ?

नानक बिरदु राम का देखहु अभै दानु तिह दीना ॥३॥१॥

प्रभु का यश देखो—उसने उस (गज) को भी अभय दान दे दिया ।

साधो कउन जुगति अबि कीजै ॥

हे साधुओ ! अब कौन-सा उपाय करें ?

जा ते दुरमति सगल बिनासै राम भगति मनु भीजै ॥१॥रहाउ॥

जिस (उपाय) से सम्पूर्ण दुर्मति दूर हो जाए तथा प्रभु भक्ति में मन तल्लीन हो जाए।

मनु माइआ महि उरझि रहिओ है बूझै नह कछु गिआना ॥

मन माया में उलझा हुआ है, (आत्म) ज्ञान की कुछ भी समझ नहीं है ।

कउनु नामु जगु जा कै सिमरै पावै पदु निरबाना ॥१॥

संसार में वह कौन सा नाम है ? जिसका स्मरण कर जीव निर्वाण पद प्राप्त कर लेता है ।

भए दइआल किरपाल संत जन तब इह बात बताई ॥

सन्त जन जब दयालु हुए तो उन्होंने यह बात बताई,

सरब धरम मानो तिह कीए जिह प्रभ कीरति गाई ॥२॥

जिस (प्राणी) ने प्रभु-कीर्ति गाई है उसने सभी धर्म किए हैं।

राम नामु नरु निसि बासुर महि निमख एक उरिधारै ॥

(जो प्राणी) प्रभु का नाम दिन-रात में एक क्षण मात्र भी यदि हृदय में धारण करे (स्मरण करे)।

जम को तासु मिटै नानक तिह अपुनो जनमु सवारै ॥३॥२॥

(उसका) यम का भय दूर हो जाता है तथा वह अपना मानव-जन्म सफल कर लेता है।

प्रानी नाराइण सुधि लेहि ॥

हे प्राणी ! तू प्रभु का स्मरण कर।

छिनु छिनु अउध घटै निसि बासुर बिरथा जातु है देह ॥१॥रहाउ॥

रात दिन क्षण-प्रतिक्षण आयु घट रही है तथा शरीर व्यर्थ नष्ट हो रहा है।

तरुनापो बिखिअन सिउ खोइओ बालपनु अगिआना ॥

बालपन (बचपन) अज्ञान में बीत गया (और) यौवन विषय-विकारों में लिप्त होकर नष्ट कर दिया।

बिरधि भइओ अजहू नही समझै कउन कुमति उरझाना ॥१॥

वृद्ध हो गया (परन्तु) अभी भी आत्मा सम्बन्धी ज्ञान उत्पन्न नहीं हुआ है। किस दुर्मति में उलझा हुआ है ?

मानस जनमु दीओ जिह ठाकुरि सो तै किउ बिसराइओ ॥

जिस प्रभु ने (तुझे) मानव जन्म दिया है। हे प्राणी ! उस प्रभु को तूने क्यों भुला दिया ?

मुकतु होत नर जा कै सिमरै निमख न ता कउ गाइओ ॥२॥

जिस प्रभु के स्मरणमात्र से मानव मुक्त हो जाता है उसका एक क्षण के लिए तूने स्मरण क्यों नहीं किया ?

माइआ को मदु कहा करतु है संगि न काहू जाई ॥

माया का घमण्ड क्यों करता है जो (अन्तिम समय) किसी के साथ नहीं जाती।

नानकु कहतु चेति चितामनि होइ है अंति सहाई ॥३॥३॥

हे प्राणी ! चिन्तामणि प्रभु का स्मरण (चिन्तन कर) जो अन्तिम समय तेरा सहायक होगा ।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

रागु मारू महला ९ ॥

हरि को नामु सदा सुखदाई ॥

प्रभु का नाम सदा सुखदाई है ।

जा कउ सिमरि अजामलु उधरिओ गनिका हू गति पाई ॥१॥रहाउ॥

जिस प्रभु का स्मरण करके अजामिल का उद्धार हो गया तथा गणिका ने परमगति पा ली ।

पंचाली कउ राज सभा महि रामनाम सुधि आई ॥

द्रौपदी को राजसभा में प्रभु के नाम की याद आई ।

ता को दूखु हरिओ करुणामै अपनी पैज बढाई ॥२॥

उस करुणामय प्रभु ने उस (द्रौपदी) का दुःख दूर किया तथा अपनी भक्त रक्षक की प्रतिज्ञा को बढ़ाया ।

जिह नर जसु किरपा निधि गाइओ ता कउ भइओ सहाई ॥

जिस प्राणी ने कृपानिधि प्रभु का यश-गान किया, उसका प्रभु सदा सहायक हुआ है ।

कहु नानक मै इही भरोसै गही आन सरणाई ॥२॥१॥

मैंने इसी विश्वास पर हे प्रभु ! आप की शरण ली है ।

अब मै कहा करउ री माई ॥

हे मां ! अब मैं क्या करूं ?

सगल जनमु बिखिअन सिउ खोइआ सिमरिओ नाहि कन्हाई ॥१॥रहाउ॥

सम्पूर्ण जन्म विषय-विकारों में आसक्त होकर खो दिया, प्रभु का स्मरण नहीं किया ।

कन्हाई—कृष्ण, परमेश्वर, प्रभु।

काल फास जब गर महि मेली तिह सुधि सभ बिसराई ॥

जब यम ने गले में फन्दा डाला तब उसने सारा ज्ञान भुला दिया।

रामनाम बिनु या संकट महि को अब होत सहाई ॥१॥

प्रभु-नाम के अतिरिक्त अब इस आपत्ति काल में अन्य कौन सहायक हो सकता है?

जो सम्पति अपनी करि मानी खिन महि भई पराई ॥

जो धन-सम्पत्ति अपनी निजी समझी थी वह एक क्षण में ही पराई हो गई।

कहु नानक यह सोच रही मनि हरि जसु कबहू न गाई ॥२॥२॥

यही मन में चिन्ता बनी रही कि प्रभु का यश कभी नहीं गया।

माई मै मन को मानु न तिआगिओ ॥

हे मां! मैंने मन का अहंकार नहीं छोड़ा।

माइआ के मदि जनमु सिराइओ राम भजन नही लागिओ ॥१॥रहाउ॥

माया के मद में आसक्त सम्पूर्ण जन्म बिता दिया। प्रभु भजन में मन नहीं लगाया।

जम को डंड परिओ सिर ऊपरि तब सोवत तै जागिओ ॥

जब यम का डण्डा सिर पर आ पड़ा तो निद्रा से जाग (सचेत) गया।

कहा होत अब के पछुताए छूटत नाहि न भागिओ ॥१॥

अब पश्चात्ताप करने से क्या होता है? हे अभागे प्राणी! अब कोई मुक्ति का उपाय नहीं।

इह चिंता उपजी घट महि जब गुर चरनन अनुरागिओ ॥

जब गुरु के चरणों से प्रेम किया तब मन में यह (उपर्युक्त) चिन्ता उत्पन्न हुई।

सफलु जनमु नानक तब हुआ जउ प्रभ जस महि पागिओ ॥२॥३॥

जब मन प्रभु के यश व प्रेम के रंग में रंजित हो गया तब यह मानव-जन्म सफल हो गया।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

रागु बसन्तु हिंडोल महला ९ ॥

साधो इहु तनु मिथिआ जानउ ॥

हे सन्त जनो ! इस शरीर को नश्वर समझो ।

या भीतरि जो राम बसतु है साचो ताहि पछानो ॥१॥रहाउ॥

इस शरीर के अन्दर जो प्रभु का अंश है उसे सत्य समझो ।

इहु जगु है संपति सुपने की देखि कहा ऐडानो ॥

इस संसार की धन सम्पत्ति आदि स्वप्नवत् है (नश्वर है), इन्हें देख कर व्यर्थ ही क्यों अहंकार करता है ?

संगि तिहारै कछू न चालै ताहि कहा लपटानो ॥१॥

तेरे साथ कुछ नहीं चलेगा। अतः इन नश्वर सांसारिक वस्तुओं के साथ तू क्यों लिप्त है ?

उसतति निन्दा दोऊ परहर हरि कीरति उरि आनो ॥

स्तुति व निन्दा दोनों का त्याग कर प्रभु-कीर्ति हृदय में बसा।

जन नानक सभ ही मै पूरन एक पुरख भगवानो ॥२॥१॥

एक पुरुष प्रभु ही सबमें परिपूर्ण है, सर्वव्यापक है।

पापी हीऐ मै कामु बसाइ ॥

इस पापी हृदय में काम बसा हुआ है।

मनु चंचलु या ते गहिओ न जाइ ॥१॥रहाउ॥

इस कारण यह चंचल मन वश में नहीं आ सकता है।

जोगी जंगम अरु संनिआस ॥
सभ ही परि डारी इह फास ॥१॥

योगी, जंगम तथा संन्यासी, इन (उपर्युक्त) सभी के ऊपर इस (काम) ने अपना फन्दा डाला हुआ है।

जिहि जिहि हरि को नामु सम्हारि ॥
ते भव सागर उतरे पारि ॥२॥

जिस-जिस प्राणी ने प्रभु-नाम स्मरण किया है।
वे सब संसार-सागर से पार उतर गए।

जन नानक हरि की सरनाइ ॥

गुरु नानक देव जी कहते हैं कि मैं दास प्रभु की शरण में आया हूँ।

दीजै नामु रहै गुन गाइ ॥३॥२॥

हे प्रभु ! मुझे अपना "नाम" दीजिए जिससे मैं आपके गुण गाता रहूँ।

माई मै धनु पाइओ हरिनामु ॥

हे मां ! मैंने प्रभु का नाम रूपी धन पा लिया।

मनु मेरो धावन ते छूटिओ करि बैठो बिसरामु ॥१॥रहाउ॥

मेरा मन अब भटकने से छूट गया तथा अब प्रभु के नाम-स्मरण रूप विश्रामावस्था में स्थिर हो गया।

माइआ ममता तन ते भागी उपजिओ निरमल गिआनु ॥

माया और ममता तन-मन से दूर हो गईं तथा शुद्ध-निर्मल ज्ञान का (मन) में उदय हुआ है।

लोभ मोह एह परसि न साकै गही भगति भगवान ॥१॥

अब लोभ, मोह, ये स्पर्श नहीं कर सकते क्योंकि प्रभु की भक्ति का हृदय में वास हो गया है।

जनम जनम का संसा चूका रतनु नामु जब पाइआ ॥

जब नाम रूपी रत्न की प्राप्ति हुई तो जन्म-जन्मान्तर का संशय दूर हो गया।

तिसना सकल बिनासी मन ते निज सुख माहि समाइआ॥२॥

मन से सम्पूर्ण तृष्णा का विनाश हो गया तथा मन स्वरूप के सुख आनन्द में लीन हो गया।

जा कउ होत दइआलु किरपा निधि सो गोबिन्द गुन गावै ॥

जिस पर कृपानिधि प्रभु दयालु होता है, वही प्राणी प्रभु के गुण गाता है।

कहु नानक इह बिधि की संपै कोऊ गुरमुखि पावै ॥३॥३॥

गुरु नानक देव जी कहते हैं कि इस प्रकार की सम्पत्ति (प्रभु कृपा रूप सम्पत्ति) कोई गुरमुख ही प्राप्त कर सकता है।

मन कहा बिसारिओ रामनामु ॥

हे मन ! तूने प्रभु का नाम क्यों भुला दिया।

तनु बिनसै जम सिउ परै कामु ॥१॥रहाउ॥

शरीर नष्ट होने पर यम से वास्ता पड़ेगा।

इहु जगु धूए का पहार ॥
तै साचा मानिआ किह बिचारि ॥१॥

यह विश्व धूम्र पर्वत है। (धुएँ का पर्वत है)।
तूने क्या सोच-विचार कर इसे सत्य (सदा स्थायी) माना है।

धनु दारा सम्पति ग्रेह ॥
कछु संगि न चालै समझ लेह ॥२॥

धन, पत्नी, सम्पत्ति, गृह आदि,
इन (उपर्युक्त) वस्तुओं में से कुछ भी तेरे साथ नहीं चलेगा—यह सत्य समझ ले।

इक भगति नाराइन होइ संगि ॥
कहु नानक भजु तिह एक रंगि ॥३॥४॥

एकमात्र प्रभु की भक्ति ही तेरे साथ रहेगी।
इसलिए एकाग्रमन से उस प्रभु का स्मरण कर।

कहा भूलिओ रे झूठे लोभ लाग॥

हे जीव ! झूठे (नश्वर) लोभ के वशीभूत हो क्यों (प्रभु को) भुला रहा है।

कछु बिगरिओ नाहनि अजहु जाग ॥१॥रहाउ॥

अभी कुछ नहीं बिगड़ा है, अभी भी जाग जा (आत्मचैतन्य हो)।

सम सुपनै कै इहु जगु जानु ॥

इस संसार को स्वप्नवत् (मिथ्या) समझ।

बिनसै छिन मै साची मानु ॥१॥

यह संसार एक क्षण में नष्ट हो जाएगा—इसे सत्य मान ले।

संगि तेरै हरि बसत नीत ॥

प्रभु सदा तेरे साथ निवास करता है।

निस बासुर भजु ताहि मीत ॥२॥

हे मित्र ! दिन रात उस प्रभु का स्मरण कर (भजन कर)।

बार अंत की होइ सहाइ ॥

वही प्रभु अन्तिम समय सहायक होगा।

कहु नानक गुन ता के गाइ॥३॥५॥

अतः सदा उस प्रभु के गुणों का गायन कर।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

रागु सारंग महला ९ ॥

हरि बिनु तेरो को न सहाई ॥
कांकी मात पिता सुत बनिता को काहू को भाई ॥१॥रहाउ॥

हे जीव ! प्रभु के बिना तेरा कोई भी सहायक नहीं।
किसकी माता, पिता, पुत्र तथा पत्नी हैं ? तथा कौन किसका भाई है ?

धनु धरनी अरु संपति सगरी जो मानिओ अपनाई ॥
तन छूटै कछु संगि न चालै कहा ताहि लपटाई ॥१॥

धन, पृथ्वी व सम्पत्ति जो तूने अपनी मान रखी थी।
शरीर छूटते समय कुछ भी साथ नहीं चलता है। अतः तूने इन (सांसारिक पदार्थों) में स्वयं को क्यों लीन कर रखा है ?

दीन दइआल सदा दुख भंजन ता सिउ रुचि न बढाई ॥

दीनों पर दया करनेवाले तथा सदा दुःखों को दूर करनेवाले प्रभु से (तूने) प्रेम (रुचि) न बढ़ाया।

नानकु कहतु जगतु सभु मिथिआ जिउ सुपना रैनाई ॥२॥१॥

गुरु नानक देव कहते हैं कि यह सम्पूर्ण संसार रात्रि के स्वप्नवत् मिथ्या (नश्वर) है।

कहा मन बिखिआ सिउ लपटाही ॥

हे मन ! विषय वासनाओं में क्यों आसक्त है ? फंसा हुआ है ?

या जग महि कोऊ रहनु न पावै इकि आवहि इकि जाही ॥१॥रहाउ॥

इस संसार में कोई भी सदा स्थिर (स्थायी) नहीं रहता। एक आता है (जन्म लेता है), एक जाता है (मरता है)।

कां को तनु धनु संपति कां की का सिउ नेहु लगाही ॥
जो दीसै सो सगल बिनासै जिउ बादर की छाही ॥१॥

किसका तन (शरीर) ? किसका धन ? किसकी सम्पत्ति ? (सांसारिक पदार्थ किसी के साथ नहीं जाते हैं)। फिर तूने किससे प्रेम किया है ?

जो दृश्यमान है, सभी नश्वर है जैसे बादल की परछाईं।

तजि अभिमानु सरणि संतन गहु मुकति होहि छिन माही ॥

अभिमान त्यागकर सन्तों की शरण ग्रहण कर, इस प्रकार एक क्षण में ही तू मुक्त हो जाएगा (मोक्ष पा लेगा)।

जन नानक भगवंत भजन बिनु सुखु सुपने भी नाही ॥२॥२॥

प्रभु-भजन के बिना स्वप्न में भी सुख नहीं प्राप्त होता।

कहा नर अपनो जनमु गवावै ॥

हे नर ! तू अपना मानव जन्म क्यों व्यर्थ बिता रहा है ?

माइआ मदि बिखिआ रसि रचिओ राम सरनि नही आवै ॥१॥रहाउ॥

माया के नशे में तथा विषय-वासनाओं के रसास्वादन में लीन-प्रभु की शरण में नहीं आता है।

इहु संसारु सगल है सुपनो देखि कहा लोभावै ॥

यह सम्पूर्ण संसार स्वप्न के समान (स्वप्नवत्) है। इसे देखकर स्वयं को इसमें क्यों लुभा रहा है ?

जो उपजै सो सगल बिनासै रहनु न कोऊ पावै ॥१॥

जो उपजा है, वह सब नष्ट हो जाएगा, कुछ भी स्थिर नहीं रह पाएगा।

मिथिआ तनु साचो करि मानिओ इह बिधि आपु बंधावै ॥

नश्वर शरीर को सत्य (स्थायी) माना हुआ है इस प्रकार स्वयं को (मोह माया) के बन्धन में बंधा देता है।

जन नानक सोऊ जनु मुकता राम भजन चितु लावै ॥२॥३॥

वह प्राणी मुक्त है जो प्रभु के भजन में चित को लगाता है।

मन करि कबहू न हरि गुन गाइओ

(मैंने) एकाग्र मन से कभी भी प्रभु के गुण नहीं गाए।

बिखिआ सकत रहिओ निसि बासुर कीनो अपनो भाइओ ॥१॥रहाउ॥

दिन-रात विषयों में आसक्त रहा—स्व मनोवांछित कार्य किया।

गुर उपदेसु सुनिओ नहि कानिन पर दारा लपटाइओ ॥

कानों से गुरु के उपदेश का श्रवण नहीं किया, पराई स्त्री में अनुरक्त रहा।

पर निंदा कारनि बहु धावत समझिओ नह समझाइओ ॥१॥

औरों की निन्दा करने में प्रयत्नशील रहता है—समझाने पर भी नहीं समझता।

कहा कहउ मै अपुनी करनी जिह बिधि जनमु गवाइओ ॥

मैं अपनी करतूत का वर्णन कहां तक करूं ? किस प्रकार मैंने अपना मानव-जन्म गवां दिया ?

कहि नानक सब अउगन मो महि राखि लेहु सरनाइओ ॥२॥४॥

गुरु नानक देव कहते हैं कि हे प्रभु ! मुझमें सभी अवगुण हैं। आपकी शरण में आया हूं मेरी रक्षा करो।

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

रागु जजावंती महला ९॥

रामु सिमरि रामु सिमरि इहै तेरै काजि है ॥

हे जीव ! निरन्तर मन-वाणी से प्रभु का स्मरण कर। यही तेरा मुख्य कार्य है।

माइआ को संगु तिआगु प्रभ जू की सरनि लागु ॥

माया का साथ त्यागकर प्रभु की शरण में लग जा।

जगत सुख मानु मिथिआ झूठो सभ साजु है ॥१॥रहाउ॥
सुपने जिउ धनु पछानु ॥
काहे परि करत मानु ॥
बारू की भीति जैसे बसुधा को राजु है ॥१॥

जगत् के सम्पूर्ण सुखों को मिथ्या (नश्वर) समझ, क्योंकि यह दृश्यमान जगत् नश्वर है।
धन को स्वप्नवत् मिथ्या जान।
किस पर अहंकार करता है ?
सम्पूर्ण पृथ्वी का राज्य रेत की दीवार-तुल्य है।

नानकु जनु कहतु बात बिनसि जैहै तेरो गातु ॥

गुरु नानक देव उपदेश देते हैं कि तेरा यह शरीर नष्ट हो जाएगा।

छिनु छिनु करि गइओ कालु तैसे जातु आजु है ॥२॥१॥

जैसे क्षण-क्षण करके कल का दिन बीत गया वैसे ही आज का दिन भी बीत जाएगा।

रामु भजु रामु भजु जनमु सिरातु है ॥

हे जीव ! निरन्तर प्रभु का भजन कर, तेरा मानव-जन्म बीत रहा है।

कहउ कहा बार बार समझत नह किउ गवार ॥

मैं तुझे बारम्बार क्या कहूं ? हे गंवार ! तू समझता क्यों नहीं ?

बिनसत न ह लगै बार ओरे सम गातु है ॥१॥रहाउ॥

इस तेरे शरीर को नष्ट होने में समय नहीं लगेगा (यह तेरा शरीर), ओले के समान (क्षणभंगुर) है।

सगल भरम डारि देहि गोबिन्द को नामु लेहि ॥

सारे भ्रमों को त्याग दे तथा निरन्तर प्रभु का नाम-स्मरण कर।

अंति बार संगि तेरै इहै एकु जातु है ॥१॥

अन्तिम समय में केवल यही एक नाम तेरे साथ जाता है।

बिखिआ बिखु जिउ बिसारि प्रभु कौ जसु हीए धारि ॥

विषयों को विष के समान भुला दे, प्रभु के यश को हृदय में धारण कर।

नानक जन कहि पुकारि अउसरु बिहातु है ।।२।।२।।

गुरु नानक देव कहते हैं कि प्रभु के नाम-स्मरण का समय बीता जा रहा है (अत: प्रभु का स्मरण कर) ।

रे मन काउन गति होइ है तेरी ।।

हे मन ! (नाम स्मरण के अतिरिक्त) तेरी कौन-सी गति होगी ?

इह जग महि राम नामु ता कउ नहो सुनहि कानि ।।

इस संसार में वास्तविक वस्तु राम-नाम है उसका तूने ध्यानपूर्वक कानों से श्रवण नहीं किया।

बिखिअन सिउ अति लुभानि मति नाहनि फेरी ।।१।।रहाउ।।

विषयों में अत्यन्त आसक्त होने के कारण (प्रभु स्मरण की ओर) तूने उस अपनी बुद्धि नहीं फेरी ।

मानस को जनमु लीनु सिमरनु नह निमख कीनु ।।

मानव जन्म लेकर भी तूने एक क्षण के लिए भी प्रभु का स्मरण नहीं किया।

दारा सुख भइओ दीनु पगहु परी बेरी ।।१।।

स्त्री-सुख के वशीभूत हो तू दीन हो गया है, इस कारण तेरे पैरों में मोह की बेड़ी पड़ी है ।

नानक जन कहि पुकारि सुपनै जिउ जग पसारु ।।

गुरु नानक देव पुकार-पुकार कर कहते हैं कि इस जग का विस्तार स्वप्नवत् है ।

सिमरत नह किउ मुरारि

प्रभु को स्मरण क्यों नहीं किया ?

माइआ जा की चेरी ।।२।।३।।

माया जिस (प्रभु) की दासी है ।

बीत जैहै बीत जैहै जनमु अकाजु रे ।।

हे जीव ! तेरा अमूल्य मानव-जन्म व्यर्थ बीत रहा है ।

निसि दिनु सुनि कै पुरान ।। समझिओ नह रे अजान ।।

दिन-रात पुराणों का श्रवण करके भी हे मूर्ख ! समझता नहीं ।

कालु तउ पहूचिओ आनि कहा जैहै भाजि रे ।।१।।रहाउ।।

अन्तिम समय (मृत्यु, यम) तो आ पहुंचा, अब भागकर कहाँ जाएगा ?

असथिरु जो मानिओ देह सो तउ तेरो होइ है खेह ॥

जिस शरीर को तूने सदा स्थायी (स्थिर) माना, वह (तन) तो तेरा नष्ट हो जाएगा।

किउ न हरि को नामु लेहि मूरख निलाज रे ॥२॥

अतः हे निर्लज्ज मूर्ख ! प्रभु का नाम क्यों नहीं लेता ?

राम भगति हीए आनि छाड़ि दे तै मन को मानु ॥

प्रभु की भक्ति हृदय (मन) में कर तथा अन्य सभी मन के अहंकारों को त्याग दे।

नानक जन इहै बखानि जग महि बिराजु रे ॥२॥४॥

गुरु नानक देव कहते हैं कि संसार में इस प्रकार (जीवन्मुक्त) होकर निवास कर।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सलोक महला ९ ॥

गुन गोबिंद गाइओ नही जनमु अकारथ कीनु ॥
कहु नानक हरि भजु मना जिह बिधि जल कउ मीन ॥१॥

(मानव-जन्म पाकर भी) प्रभु के गुण नहीं गाए। अतः मानव-जन्म व्यर्थ बिता दिया।

हे मन ! जिस प्रकार मछली पानी से बिछुड़ती नहीं, वैसे ही तू भी निरन्तर प्रभु-स्मरण में लीन रह।

बिखिअन सिउ काहे रचिओ निमख न होहि उदासु ॥
कहु नानक भजु हरि मना परहि न जम की फास ॥२॥

विषय-विकारों में सदा आसक्त क्यों रहा ? एक क्षण के लिए भी उदासीन (उपराम) क्यों नहीं हुआ ?

हे मन ! प्रभु-स्मरण (भजन) कर, जिससे तेरे गले में यम का फंदा न पड़े।

तरनापो इउ ही गइओ लीओ जरा तनु जीति ॥
कहु नानक भजु हरि मना अउध जात है बीति ॥३॥

(विषय-वासनाओं में लीन) यौवन व्यर्थ ही बीत गया, वृद्धावस्था ने इन्द्रियों (तन) को शिथिल कर दिया।

अतः हे मन ! प्रभु का भजन कर, आयु बीत रही है।

बिरधि भइओ सूझै नही कालु पहूचिओ आनि ॥
कहु नानक नर बावरे किउ न भजहि भगवानु ॥४॥

वृद्ध हो गया कुछ सूझता भी नहीं, अन्तिम समय आ पहुँचा।

गुरु नानक देव जी कहते हैं कि हे बावले जीव ! प्रभु का भजन क्यों नहीं करता ?

धनु दारा सम्पति सगल जिन अपुनी करि मानि ॥
इन महि कछु संगी नही नानक साची जानि ॥५॥

धन, स्त्री, सम्पूर्ण सम्पत्ति आदि, जिसे तूने अपना स्वयं का मान रखा है। इनमें (अन्त में) तेरा कोई साथी नहीं, यह बात सत्य समझ।

पतित उधारन भै हरन हरि अनाथ के नाथ ॥
कहु नानक तिह जानीऐ सदा बसत तुम साथि ॥६॥

प्रभु पतितों (पापियों) का उद्धार करनेवाला है, भय को दूर करनेवाला है, अनाथों का नाथ है।

उस (प्रभु) को सदा याद रखो, जो सदैव-सर्वत्र तुम्हारे साथ रहता है (साथ देता है)।

तनु धनु जिह तो कउ दीओ तां सिउ नेहु न कीन ॥
कहु नानक नर बावरे अब किउ डोलत दीन ॥७॥

जिस प्रभु ने तुझे तन तथा धन दिया है उस प्रभु से तूने प्रेम नहीं किया।
हे मूर्ख गँवार प्राणी ! अब दीनों के समान क्यों डोलता फिरता है ?

तनु धनु संपै सुखु दीओ अरु जिह नीके धाम ॥
कहु नानक सुनु रे मना सिमरत काहि न रामु ॥८॥

जिस (प्रभु) ने तुम्हें शरीर, धन-सम्पत्ति, सुन्दर गृह तथा सभी प्रकार के सुख दिए हैं।

हे मन ! उस प्रभु का स्मरण क्यों नही करता ?

सभ सुख दाता रामु है दूसर नाहिन कोइ ॥
कहु नानक सुनु रे मना तिह सिमरत गति होइ ॥९॥

सभी सुखों का दाता प्रभु है, अन्य दूसरा कोई नहीं।
हे मन सुन ! उस प्रभु के स्मरण से ही तेरी सद्गति होगी।

जिह सिमरत गति पाईऐ तिह भजु रे तै मीत ॥
कहु नानक सुनु रे मना अउध घटत है नीत ॥१०॥

हे मित्र ! जिसका स्मरण करने से मोक्ष प्राप्ति होती है उसका नित्य भजन कर।
हे मन ! ध्यानपूर्वक सुन आयु नित्य प्रति घटती है।

पांच तत को तनु रचिओ जानहु चतुर सुजान ॥
जिह ते उपजिओ नानका लीन ताहि महि मानि ॥११॥

हे चतुर ज्ञानी जीव ! यह जान लो कि इस शरीर को प्रभु ने पांच तत्वों से रचा है।
जिन पांच तत्वों से यह शरीर उत्पन्न हुआ है उन्हीं पांच तत्वों में लीन हो जाएगा, इसे सत्य मानो।

घट घट महि हरि जू बसै संतन कहिओ पुकारि ॥
कहु नानक तिह भजु मना भउनिधि उतरहि पारि ॥१२॥

प्रत्येक हृदय में प्रभु का निवास है—यह सन्तों ने पुकार-पुकार कर कहा है।
हे मन उस प्रभु का स्मरण कर जिस द्वारा भवसागर से पार हो जाएगा।

सुखु दुखु जिह परसै नही लोभु मोहु अभिमानु ॥
कहु नानक सुनु रे मना सो मूरति भगवान ॥१३॥

जिस प्राणी को सुख, दुःख, लोभ, मोह तथा अहंकार स्पर्श नहीं करते हैं, हे मन ! सुन, वह (प्राणी) प्रभु की मूर्ति है।

उसतति निंदिआ नाहि जिह कंचन लोह समानि ॥
कहु नानक सुनु रे मना मुकति ताहि तै जानि ॥१४॥

जिस (प्राणी) को स्तुति और निन्दा स्पर्श नहीं करती तथा जिसके लिए स्वर्ण व लोह समान हैं
हे मन ! सुन, उसे तू मुक्त जीव समझ।

हरखु सोगु जा कै नही बैरी मीत समानि ॥
कहु नानक सुनु रे मना मुकति ताहि तै जानि ॥१५॥

जिसे हर्ष व शोक अनुभव नहीं होता, जिसके लिए बैरी तथा मित्र समान हैं हे मन ! सुन उसे तू मुक्त पुरुष समझ।

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥
कहु नानक सुनु रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥१६॥

जो न किसी को भय देता है तथा न किसी से भय मानता है हे मन ! सुन उसे ज्ञानी पुरुष कहो।

जिहि बिखिआ सगली तजी लीओ भेख बैराग ॥
कहु नानक सुनु रे मना तिह नर माथै भागु ॥१७॥

जिसने सम्पूर्ण विषय-वासना त्याग दी, बैरागियों का वेश धारण कर लिया

हे मन ! सुन उस प्राणी के मस्तिष्क (भाल) पर उत्तम भाग्य समझो।

जिहि माइआ ममता तजी सभ ते भइओ उदासु ॥
कहु नानक सुनु रे मना तिह घटि ब्रह्म निवासु ॥१८॥

जिस प्राणी ने माया, ममता त्याग दी तथा सभी विषयों से उदास (उपराम) हो गया

श्री गुरु नानक देव कहते है—हे मन ! सुन उसके अन्तःकरण में ब्रह्म का निवास है।

जिहि प्रानी हउमै तजी करता रामु पछानि ॥
कहु नानक वहु मुकति नरु इह मन साची मान ॥१९॥

जिस प्राणी ने अहंकार त्याग दिया, कर्त्ता पुरुष प्रभु को पहिचान लिया है, हे मन ! वह प्राणी मुक्त है, यह बात सत्य मान लो।

भै नासन दुरमति हरन कलि महि हरि को नामु ॥
निसदिनु जो नानक भजै सफल होहि तिह काम ॥२०॥

कलियुग में प्रभु का नाम ही भय को नाश करनेवाला, दुर्बुद्धि को दूर करने वाला है।

जो प्राणी प्रतिदिन प्रभु को भजता है, उसके सभी कार्य सफल हो जाते हैं।

जिहबा गुन गोबिन्द भजहु करन सुनहु हरिनामु ।।
कहु नानक सुनि रे मना परहि न जम कै धाम ।।२१।।

जिह्वा से प्रभु के गुण गाओ, कानों से प्रभु का नाम श्रवण करो। हे मन ! सुन वह नर यम के धाम (यमालय) को नहीं जाता है।

जो प्रानी ममता तजै लोभ मोह अहंकार ।।
कहु नानक आपन तरै अउरन लेत उधार ।।२२।।

जो प्राणी ममता, लोभ, मोह तथा अहंकार को त्याग देता है वह स्वयं तो भवसागर से तर जाता है, अन्य (संगी साथियों) को भी पार उतार लेता है।

जिउ सुपना अरु पेखना ऐसे जग कउ जानि ।।
इन महि कछु साचो नही नानक बिनु भगवान ।।२३।।

जिस प्रकार स्वप्न में (किसी पदार्थ का) देखना (मिथ्या) है उसी प्रकार संसार को समझ।

इन (सांसारिक पदार्थों) में प्रभु के अतिरिक्त कुछ भी सत्य नहीं।

निसि दिनु माइआ कारने प्रानी डोलत नीत ।।
कोटन महि नानक कोऊ नाराइणु जिह चीति ।।२४।।

प्राणी, माया एकत्र करने के लिए रात-दिन भटकता रहता है। करोड़ों के मध्य कोई बिरला ही प्राणी होगा जिसके अन्तःकरण में प्रभु का वास होता है।

जैसे जल ते बुदबुदा उपजै बिनसै नीत ।।
जग रचना तैसे रची कहु नानक सुनि मीत ।।२५।।

जिस प्रकार जल पर हवा का बुदबुदा उत्पन्न तथा विनष्ट होता रहता है, हे मित्र ! वैसे ही संसार की रचना प्रभु ने रची है।

प्रानी कछू न चेतई मदि माइआ कै अंधु ।।
कहु नानक बिनु हरि भजन परत ताहि जम फंद ।।२६।।

माया के मद में मदमस्त प्राणी किंचितमात्र भी प्रभु को स्मरण नहीं करता। प्रभु के भजन के बिना प्राणी यम के बन्धनों में पड़ता है।

जउ सुख कउ चाहै सदा सरनि राम की लेह ।।
कहु नानक सुनि रे मना दुरलभ मानुख देह ।।२७।।

जो प्राणी सदा सुख चाहता है वह प्रभु की शरण ग्रहण करे। हे मन ! सुन यह मानव शरीर दुर्लभ है (इस मानव-जन्म की प्राप्ति दुर्लभ है)।

माइआ कारनि धावही मूरख लोग अजान ॥
कहु नानक बिनु हरि भजन बिरथा जनमु सिरान ॥२८॥

माया एकत्रित करने के लिए मूर्ख अज्ञानी जन भाग-दौड़ करते हैं। प्रभु भजन के बिना मानव जन्म व्यर्थ गंवाते हैं।

जो प्रानी निसि दिनु भजै रूप राम तिह जानु ॥
हरि जन हरि अन्तरु नही नानक साची मानु ॥२९॥

जो प्राणी प्रतिदिन प्रभु का भजन करता है उसे प्रभु स्वरूप जान। (क्योंकि) प्रभु तथा प्रभु-भक्त में कोई अन्तर नहीं, यह बात सत्य मान।

मनु माइआ महि फधि रहिओ बिसरिओ गोबिंद नामु ॥
कहु नानक बिनु हरि भजन जीवन कउने कामु ॥३०॥

जिस प्राणी का मन सदा माया (जाल) में फंसा रहा, तथा जिसने प्रभु के नाम को भुला दिया उसका जीवन प्रभु-भजन के बिना किस काम का है (व्यर्थ है)।

प्रानी रामु न चेतई मदि माइआ कै अंधु ॥
कहु नानक हरि भजन बिनु परत ताहि जम फंध ॥३१॥

मद (नशा) तथा माया के अहं में गर्वित मूर्ख प्राणी "प्रभु" नाम का स्मरण नहीं करता। गुरु नानक देव कहते हैं कि प्रभु भजन के बिना उसके गले में यम का फन्दा पड़ जाता है।

सुख महि बहु संगी भए दुख महि संगि न कोइ ॥
कहु नानक हरि भजु मना अंति सहाई होइ ॥३२॥

सुख के समय बहुत मित्र साथी बन जाते हैं दुःख के समय कोई भी मित्र नहीं बनता। हे मन ! प्रभु का भजन कर जो अन्त समय में सहायक होगा।

जनम जनम भरमत मिटिओ न जम को त्रासु ॥
कहु नानक हरि भजु मना निरभै पावहि बासु ॥३३॥

जन्म-जन्मान्तर भटकता फिरा पर यम का भय दूर नहीं हुआ। हे मन ! प्रभु का स्मरण कर जिससे तू भयरहित (निर्भय) स्थान को प्राप्त कर ले।

जतन बहुतु मै करि रहिओ मिटिओ न मन को मानु ॥
दुरमति सिउ नानकु फधिओ राखि लेहु भगवान ॥३४॥

मैंने बहुत प्रयत्न किए परन्तु मेरे मन का अहंकार दूर नहीं हुआ। दुर्मति में फंसा हूँ। हे प्रभु ! मेरी रक्षा करो।

बाल जुआनी अरु बिरधि फुनि तीनि अवसथा जानि ।।
कहु नानक हरि भजन बिनु बिरथा सभ ही मान ।।३५।।

बाल, यौवन, बुढ़ापा ये तीन अवस्थाएं हैं। प्रभु-भजन के बिना सभी कुछ व्यर्थ है, यह बात सत्य मान ले।

करणो हुतो सु ना कीओ परिओ लोभ कै फंध ।।
नानक समिओ रमि गइओ अब किउ रोवत अंध ।।३६।।

जो करने योग्य था वह नहीं किया, लोभ के फन्दे में पड़ा रहा। प्रभु-स्मरण का समय अब निकल गया है। हे अन्धे प्राणी अब क्यों रोता है ?

मनु माइआ मै रमि रहिओ निकसत नाहिन मीत ।।
नानक मूरति चित्र जिउ छाडित नाहिन भीति ।।३७।।

हे मित्र ! मन माया-जन्य अहंकार में रमा हुआ (उस मद से) बाहर नहीं निकलता, जैसे दीवार पर अंकित मूर्ति (चित्र) अपने आधार दीवार को नहीं छोड़ती है।

नर चाहत कछु अउर अउरै की अउरै भई ।।
चितवत रहिओ ठगउर नानक फासी गलि परी ।।३८।।

मनुष्य (प्रभु-स्मरण के अतिरिक्त) कुछ अन्य ही चाहता है परन्तु (प्रभु की ओर से) कुछ और की और हो जाती है।

मानव अपने मन में दूसरों को छलने की युक्तियां सोचता रहता है पर उसके अपने गले में यम का फन्दा डल जाता है।

जतन बहुत सुख के कीए दुख को कीओ न कोइ ।।
कहु नानक सुनि रे मना हरि भावै सो होइ ।।३९।।

सुख-प्राप्ति के यत्न तो बहुत किए पर दुःख-निवृत्ति का कोई भी यत्न नहीं किया।

हे मन ! सुन जो प्रभु की इच्छा है, वही होगा।

जगतु भिखारी फिरतु है सभ को दाता रामु ।।
कहु नानक मन सिमरु तिह पूरन होवहि काम ।।४०।।

सबको देने वाला एक प्रभु है शेष यह सम्पूर्ण जगत भिक्षु बना घूमता है।

हे मन ! उस प्रभु का स्मरण कर, तेरे जीवन के सभी कार्य पूर्ण हो जायेंगे।

झूठै मानु कहा करै जगु सुपने जिउ जानि ।।
इन महि कछु तेरो नही नानक कहिओ बखानि ।।४१।।

मिथ्या अभिमान क्यों करता है ? इस संसार को स्वप्नवत् समझ ।

इन (सांसारिक पदार्थों में) तेरा स्वयं का कुछ भी नहीं इसे (शाश्वत सत्य) मान ।

गरबु करतु है देह को बिनसै छिन महि मीत ।।
जिहि प्रानी हरि जसु कहिओ नानक तिहि जगु जीतु ।।४२।।

हे मित्र ! इस शरीर का अभिमान करता है, जो एक क्षण में नष्ट हो जाएगा।

जिस प्राणी ने प्रभु का यशोगान किया है उसने सम्पूर्ण विश्व को जीत लिया है।

जिह घटि सिमरनु राम को सो नरु मुकता जानु ।।
तिह नर हरि अंतरु नही नानक साची मानु ।।४३।।

जिस प्राणी के हृदय में प्रभु-स्मरण विद्यमान है उसे तुम मुक्त प्राणी समझो । उस (प्रभु-भक्त) प्राणी तथा प्रभु में कोई अन्तर नहीं, यह बात सत्य मानो ।

एक भगति भगवान जिह प्रानी कै नाहि मनि ।।
जैसे सूकर सुआन नानक मानो ताहि तनु ।।४४।।

जिस प्राणी के मन में एक प्रभु की भक्ति नहीं उस प्राणी के शरीर को सूअर अथवा कुत्ते के समान मानो ।

सुआमी को ग्रिहु जिउ सदा सुआन तजत नही नित ।।
नानक इह बिधि हरि भजहु इक मनि हुइ इकि चिति ।।४५।।

जिस प्रकार कुत्ता अपने मालिक के घर को कभी नहीं त्यागता है, उसी प्रकार एकाग्रमन तथा एकाग्रचित होकर प्रभु का स्मरण करो ।

तीरथ बरत अरु दान करि मन महि धरै गुमानु ।।
नानक निहफल जात तिह जिउ कुंचर इसनानु ।।४६।।

तीर्थ-सेवन, व्रत तथा दान करके यदि (प्राणी) मन में अहंकार रखता है।

उसके (ये सभी पुण्य कर्म) निष्फल हो जाते हैं जिस प्रकार हाथी का स्नान (व्यर्थ है) ।

सिरु कंपिओ पग डगमगे नैन जोति ते हीन ।।
कहु नानक इह बिधि भई तऊ न हरि रस लीन ।।४७।।

(जरावस्था में) सिर कांपने लगा, पैर डगमगाने लगे, नेत्र ज्योतिहीन हो गए ।

इस प्रकार की अवस्था हो गई, प्राणी फिर भी प्रभु-स्मरण के रसास्वादन में लीन नहीं होता है।

निज करि देखिओ जगतु मै को काहू को नाहि ॥
नानक थिरु हरि भगति है तिह राखहु मन माहि ॥४८॥

इस संसार को अपना बना कर देख लिया, इस संसार में कोई किसी का (सम्बन्धी) नहीं।

प्रभु की भक्ति ही एक स्थिर पदार्थ है उसे मन में बसाओ।

जग रचना सभ झूठ है जानि लेहु रे मीत ॥
कहि नानक थिरु ना रहै जिउ बालू की भीति ॥४६॥

हे मित्र! जान लो कि सम्पूर्ण संसार की रचना मिथ्या है। बालू की दीवार के समान कुछ भी स्थायी नहीं है।

रामु गइओ रावनु गइओ जा कउ बहु परवारु ॥
कहु नानक थिरु कछु नही सुपने जिउ संसारु ॥५०॥

रामचन्द्र जी तथा रावण भी इस संसार से चले गए जिनका विस्तृत परिवार था।

यहां कुछ भी स्थायी नहीं, संसार स्वप्नवत् है।

चिंता ता की कीजिऐ जो अनहोनी होइ ॥
इहु मारगु संसार को नानक थिरु नही कोइ ॥५१॥

जो अनहोनी (न होने वाली बात हो) उसकी चिन्ता करो। यह संसार का मार्ग है—यहां कुछ भी स्थिर नहीं है।

जो उपजिओ सो बिनसि है परो आजु कै कालि ॥
नानक हरि गुन गाइ ले छाडि सगल जंजाल ॥५२॥

जो उत्पन्न हुआ है वह नष्ट हो जाएगा, आज चाहे कल या परसों (नष्ट हो जाएगा)। (इसलिए) सभी संसार के झंझटों को त्यागकर प्रभु के गुण गा ले।

दोहरा॥ **बलु छुटकिओ बंधन परे कछू न होत उपाइ ॥**
कहु नानक अब ओट हरि गज जिउ होहु सहाइ ॥५३॥

शक्ति क्षीण हो गई (सांसारिक) बन्धनों ने घेर लिया। अब कुछ भी (मुक्ति का) उपाय नहीं हो सकता। अब हे प्रभु! तेरी शरण ही एकमात्र मेरी मुक्ति का आश्रय अतः मेरे उसी प्रकार सहायक होओ जिस प्रकार गज के सहायक हुए थे।

बलु होआ बंधन छुटे सभु किछु होत उपाइ ।।
नानक सभु किछु तुमरै हाथ महि तुम ही होत सहाइ ।।५४।।

(जब प्रभु की कृपा-दृष्टि हुई तो) शक्ति सबल (जागृत) हो गई, बन्धन टूट गए, मुक्ति के सभी साधन सम्भव हो गए।

हे प्रभु ! सभी कुछ तुम्हारे हाथ में है, तुम ही मेरे सहायक हो।

संग सखा सभि तजि गए कोऊ न निबिही साथि ।।
कहु नानक इह बिपति कहि टेक एक रघुनाथ ।।५५।।

संगी, साथी, मित्र सभी साथ छोड़ गए, कोई भी साथ नहीं निभा पाया। गुरु नानक कहते हैं कि इस विपत्ति में एक प्रभु का ही आश्रय है।

नामु रहिओ साधू रहिओ रहिओ गुरु गोबिंदु ।।
कहु नानक इह जगत महि किन जपिओ गुरमंतु ।।५६।।

प्रभु का नाम, साधु तथा प्रभु सदा अमर हैं।

इस संसार में किसी विरले जीव ने ही गुरु का उपदेश लेकर प्रभु-नाम स्मरण किया है।

रामनामु उर महि गहिओ जा कै सम नही कोइ ।।
जिह सिमरत संकट मिटै दरसु तुहारो होइ ।।५७।।

प्रभु-नाम के तुल्य (सांसारिक पदार्थ) कोई नहीं, जिस प्राणी के हृदय में यह नाम प्रवेश कर गया वह (प्राणी भी) श्रेष्ठ है।

जिस नाम के स्मरण से संकट मिट जाते हैं तथा आप (प्रभु) का दर्शन हो जाता है।

—:०:—